चतुर्थ अध्याय

समाजशास्त्रीय निकष पर कमल कुमार की कहानियाँ

कमल कुमार की कहानियों में समाजशास्त्रीय कसौटी पर एक गहरा प्रभाव दिखाई पड़ता है जिस कारण किसी भी एक दौर की समान परिस्थितियों, पृष्ठभूमि और परिवेश के बावजूद रचना मानसिकता का सृजन होता है। हालाँकि विषय के धरातल पर सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक, सांस्कृतिक एवं आर्थिक सन्दर्भ समान हो सकते हैं किन्तु इनको अभिव्यक्त करने वाले पात्र और अभिव्यंजना शक्ति की पद्धति भिन्न होती है। यहां पर मन विवेचना करता है कि समान परिवेश एवं युग बोध दृष्टि के बावजूद रचना कर्म स्थूल रूप में समान होते हुये भी सूक्ष्म रूप से एक दूसरे से भिन्न क्यों और कैसे होता है । इस जिज्ञासा के समाधान स्वरूप लेखक के बीच अन्तर्योजन के सूत्रों की पहचान जरूरी हो जाती है। कहानियों के संदर्भ में कमल कुमार नारी के स्वतंत्र अस्तित्व की पक्षधर हैं। इन्होनें पुरूष की निरंकुशता को ध्वस्त कर स्त्री को अपनी शक्ति खुद पहचानने की बात कही है।

आधुनिक महिला लेखिकाओं में डॉ. कमल कुमार का महत्वपूर्ण स्थान है। डॉ कमल कुमार की लेखनी का केन्द्रीय बिन्दु प्रमुख रूप से नारी है और नारी से सम्बन्धित समस्या को अपनी रचना कर्म के माध्यम से समाज के सामने लाने का भरपूर प्रयत्न किया है कभी भारतीय नारी के रूप में तो कभी पाश्चात्य नारी की स्थिति से पाठकों को अवगत कराने में वह नारी स्वतंत्रता की प्रबल पक्षधर हैं और उसे हर हाल में अपने पैरों पर खड़ा देखना चाहती हैं। कमल कुमार की देश-विदेश की यात्राएँ उनकी रचनाओं को महत्वपूर्ण बनाती है। वे यात्रा के दौरान जो भी चीजें देखी और महसूस की उसे अपनी रचना के माध्यम से समाज में रखा। वे लोगों से

मिली और उनकी समस्याओं को निकट से देखा, समझा और उसे आत्मसात करके अपनी रचनाओं में उकेरा। इनकी रचनाओं में रूग्ण मान्यताओं के प्रति विद्रोह, स्वस्थ आधुनिक दृष्टिकोण, नष्ट होते पारम्परिक मुख्यों की स्थापना और नारी जागृति आदि मुख्य रूप में लाई है।

इनकी कहानियों में समाजशास्त्रीय निकष पर पारिवारिक समस्याओं में पति-पत्नी सम्बन्ध, पारिवारिक विघटन की समस्या, पारिवारिक एवं परस्पर सम्बन्धों का अभाव दिखाई पड़ता है। समाज में घर, परिवार आदि समाज की समस्या बन गयी है। सामाजिक समस्याओं में विवाह, तलाक, भूख एवं गरीबी, स्त्री के मुक्ति एवं वृद्धावस्था की समस्या आदि है। इसमें आर्थिक समस्या, धन लालसा का चित्रण, बेरोजगारी की समस्या एवं धार्मिक समस्या है- धर्मान्ध और समाज में व्याप्त कुरूतियाँ और रूढ़ियों की समस्या आदि । इन सबको लेकर राजनीतिक समस्या भी दिखाई पड़ती है। इसीलिए साहित्यकार युग के प्रति सचेत रहकर साहित्य सृजन करता है। इस दृष्टि से कथा साहित्य युग सत्य को पहचानने की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है। इनके कथा साहित्य में वर्तमान समय में व्याप्त उन सभी समस्याओं को उजागर किया गया है, जो हमारे समाज को अन्दर ही अन्दर से खोखला करती जा रही है। इन समस्याओं के उपजने के कारण क्या हैं और इन्हें समाप्त कैसे किया जा सकता है, एवं इसका समाधान क्या है?

कमल कुमार की कहानियों में राजनीतिक परिस्थितियों में समस्या अपने पूर्ववर्ती युग की अगली कड़ी बन कर उभरता है। आधुनिक हिन्दी साहित्य का स्वातंत्र्योत्तर युग भी भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन की सापेक्षता का प्रतिफल है। द्वितीय महायुद्ध की समाप्ति के लगभग एक वर्ष बाद 15 अगस्त 1947 को जब भारत आजाद हुआ तो उनके आधुनिक इतिहास का एक दौर समाप्त हो गया। जिसके बाद आर्थिक समस्या से स्वतंत्रता मिलने के बाद देश पर एक गंभीर जिम्मेदारी आ गयी कि वह अपनी अर्थ व्यवस्था को बेहतर करें क्योंकि जो जनता वर्षों से देश

की आजादी का स्वप्न देख रही थी। वह स्वतंत्रता के बाद अपनी सरकार से यह अपेक्षा करने लगी कि यह सरकार उनके आर्थिक कष्टों को भी दूर करेगी। महात्मा गाँधी ने कहा था "मैं समझता हूँ कि वर्षों तक भारत को ऐसे कानून बनाने पड़ेंगे जो शोषितों और दलितों को उस गड्ढे से निकालें जिसमें उन्हें पूंजीपतियों, जमीदारों और ऊंचे कहे जाने वाले लोगों ने धकेल दिया है। अगर हम इन लोगों को इस दलदल से निकालना चाहते तो भारत के राष्ट्रीय सरकार का यह आवश्यक कर्तव्य होगा कि वह अपने घर को ठीक करे और बराबर इन लोगों को ऊँचा स्थान दे और उनको इस बोझ से उबारे जिसके नीचे वे पिसे जा रहे हैं।[1]

सामाजिक परिस्थितियों में स्वतंत्रता के बाद केन्द्रीय सरकार ने पिछड़े वर्गो में नवीन चेतना उत्पन्न करने के प्रयत्न किये हैं। उन्हें सुरक्षा प्रदान करने के लिये अनेक सरकारी प्रयत्न किये गये हैं। इस दिशा में स्त्रियों की दृष्टि से हिन्दूधर्म एक महत्वपूर्ण विषय था। इस कानून से स्त्री पुरूषों के अधिकारों में समानता ला दी गई। तलाक की कानूनी मान्यता प्राप्त हो जाने से स्त्रियों में स्वतंत्र व्यक्तित्व का जन्म हो गया। द्वि-विवाह और बहु-विवाह पर नियंत्रण लग जाने से स्त्री अब अधिक सुरक्षित अपने को अनुभव करने लगी है। पारिवारिक सम्पत्ति के उत्तराधिकारी की दृष्टि से भी स्त्री को अब पुरूष के समान अधिकार प्राप्त हो गयें है। दहेज प्रथा कानून के द्वारा अवैध घोषित कर दी गई है। अब तक पुरूष ही किसी बच्चे को गोद ले सकता था किन्तु अब स्त्री भी बच्चे को गोद ले सकती है। बढ़ती हुई जनसंख्या एवं स्त्री के स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुये गर्भपात को वैध घोषित कर दिया गया है। इसी प्रकार अस्पृश्यता को लेकर समाज में जो अन्याय और उत्पीड़न प्रचलित था उसे 1955 के अस्पृश्यता (अपराध) अधिनियम द्वारा रोक दिया गया है। राजनीति और आर्थिक स्थितियों में संतुलन न होने के कारण हर स्तर पर भ्रष्टाचार और अराजकता आज समाज में विद्यमान है।

किसी भी देश की परिस्थितियों का प्रभाव वहां के सहित्य पर पड़ना स्वाभाविक है। कहानी साहित्य में स्वतंत्र्योत्तर भारत की राजनितिक, आर्थिक तथा सामाजिक परिस्थितियों का स्पष्ट प्रतिबिम्ब दृष्टिगोचर होता है। कहानीकार ने इन परिस्थितियों को स्वयं महसूस किया है। इसलिये उनका कटु किन्तु यथार्थ अनुभव उनकी कहानियों का केन्द्र बना है। भारत की परिस्थितियों का अवलोकन करने से यह तो स्पष्ट हो गया है कि किसी भी क्षेत्र में वह राजनीतिक हो या आर्थिक अथवा सामाजिक हम उस बिन्दु पर नहीं पहुँच पायें हैं जहाँ स्थिति को संतोषजनक कहा जा सके। इस असंतोष की झलक हमें आलोचना कालीन कहानियों में दिखाई पड़ता है। यही नहीं बदलते हुये जीवन मुख्यों का चित्रण भी आज की कहानी करती है। देश की विभिन्न समस्याएँ भी आज की कहानियों में उठाई गई है। समाज में बदलते हुये स्त्री-पुरूष के सम्बन्ध आलोचना युगीन कहानी में चित्रित हुये हैं। इस काल के परिवर्तित परिस्थितियों का सर्वाधिक प्रभाव परिवार पर पड़ा हैं । आज परिवार का पुराना रूप बदल गया है। पारिवारिक संबंध बदल गये हैं। आज आर्थिक पक्ष दुर्बल होने के कारण बहन-भाई, बाप-बेटे आदि सभी रिश्तों में अनायास ही परिवर्तन एवं समस्या आ जाती है।

स्पष्टतः कहा जा सकता है कि कमल कुमार की कहानियों में सामाजिक निकष पर समाज का कोई पक्ष कोई बिन्दु लेखिका की दृष्टि से अछूता नहीं रहा है। आज संयुक्त परिवार व्यवस्था टूट रही है। पति-पत्नि, भाई-बहन, पिता-पुत्र, मां-पुत्र, के सहज सम्बन्धों की अपेक्षा औपचारिक दिखावा और स्वार्थ बढ़ रहा है। परिवार की इन समस्याओं पर विविध कोणों से लेखिका ने लिखा है और उसकी समस्याओं के हर पहलू को आंकने एवं दिखाने का प्रयास किया है। इनकी अनेक कहानियां परिवार के अनेक समस्याओं को स्पष्ट करती है । लेखिका ने परिवार के संदर्भ हो या समाज के बदलते जीवन मूल्य अथवा राजनीतिक घटनाएँ हों, प्रत्येक बिन्दु को अत्यंत सजगता के साथ पकड़ा है।

4.1 पारिवारिक समस्याएँ

परिवार मानव समाज की एक महत्वपूर्ण और कल्याणकारी संस्था है। सृष्टि के आदिकाल से आज तक इसकी अनिवार्यता सर्वत्र पाई जाती है। समाज का संरक्षण और संवर्धन परिवार पर अवलम्बित है। मानव के विकास का इतिहास परिवार से जुड़ा हुआ है। एक सामान्य घर या परिवार में सदस्यों के रहने के लिये एक घर होता है। कभी-कभी ऐसा भी होता है कि पति न पत्नी के घर रहता है और न पत्नी, पति के घर रहती है। यद्यपि वे दोनों ही एक नया घर बनाकर रहने लगते हैं। आधुनिक समय में प्रायः पति –पत्नी नया घर बनाकर या लेकर रहने लगते हैं। वर्तमान में परिवार जैसी संस्था का क्या रूप है? परिवार में समस्या को लेकर संयुक्त परिवार का विघटन हो रहा है। जिससे समस्याओं में वृद्धि होती जा रही है। यह निश्चित रूप से बताया नहीं जा सकता परन्तु भारतीय पारिवारिक जीवन को देखने से यह स्पष्ट होता है कि आज सामाजिक मूल्य टूट रहे हैं तथा पुरानी मान्यताएँ जैसे संयुक्त परिवार व संबंध जर्जर हो रहे हैं।

पिता-पुत्र, पति-पत्नी, भाई-बहन के पुराने रिश्ते बदल गये हैं। पुत्र अपने पिता से औपचारिक रिश्ता निभाता है और भावावेश में आकर पिता की हत्या भी कर देता है। भाई-बहन के परम्परा अनुमोदित स्वाभाविक स्नेह रिश्ते विच्छिन्न हो रहे हैं। पितृ वर्ग के प्रति नई पीढ़ी में विद्रोह का भाव परिव्याप्त है। परिवार का आर्थिक और धार्मिक महत्व समाप्त हो चुका है। परिवार के अन्दर माता-पिता बच्चों का उत्तरदायित्व स्वंय न उठा कर नौकर या शिक्षकों पर छोड़ देते हैं। इसलिये संतान का उचित निर्देशन न होने के कारण वह विवेक हीनता और अराजकता की ओर अग्रसर होती जा रही है।

परिवार को सामाजिक मानदण्ड में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। परिवार का निर्माण ही इस आधार पर हुआ है कि उसकी समाज में मान्यता है। उसे समाज मे स्थायित्व मिल गया है। संस्था का निर्माण मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति हेतु हुआ है । श्याम बहादुर वर्मा लिखते हैं। "जिससे सामाजिक इच्छाओं और आवश्यकताओं की पूर्ति होती है और जो व्यक्तियों को नियंत्रित करती है।"[2] परिवार यानी संस्था व्यक्तियों के व्यवहार पर नियंत्रण लगाने का कार्य भी करती है। परिवार, राजनीति, विवाह आदि संस्थाएँ हमें देखने को मिलती हैं। कमल कुमार की कहानियों मे पारिवारिक समस्याओं को लेकर जो भी विवेचना का स्वरूप प्राप्त होता है वह परिवार की मूल समस्या है। परिवार में तमाम तरह की समस्या देखने को मिलती है। इसमें छोटी-छोटी बातों को लेकर समस्या उत्पन्न हो जाती है। वहीं छोटी सी समस्या परिवार में विघटन करा देती है। वर्तमान में संयुक्त परिवार की स्थिति बद से बदतर होती जा रही है।

पारिवारिक समस्या का कारण देखें तो स्वतंत्रता का अभाव, आर्थिक अभाव, धार्मिक मान्यता का अभाव एवं सामाजिक अभाव में समस्या की स्थापना होती जा रही है। वर्तमान में प्रत्येक पति-पत्नी एवं अन्य सदस्य को अलग रहने की स्वतंत्रता चाहिये। कोई बंधन न हो। वैसे देखा जा सकता है कि पारिवारिक संस्था समाज की सभी संस्थाओ में महत्वपूर्ण स्थान रखती है। सोहन राज तातड़े एवं सुशील नान्दल लिखते हैं कि "सभी समाजों में बच्चों का जन्म और पालन पोषण परिवार में होता है। बच्चों का संस्कार करने और समाज के आचार व्यवहार में उन्हें दीक्षित करने को काम मुख्य रूप से परिवार में होता है।"[3] परिवार विवाह सम्बन्धों के कारण संख्या में बढ़ता जा रहा है। इसमें माता-पिता / पति-पत्नि का यह दायित्व है कि वह अपने बच्चों के प्रति अपनी जिम्मेदारी ठीक ढंग से निभायें। उनका भरण-पोषण करें और उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति करें परिवार में सम्बन्धों का एक जाल बना होता है जिसमें सारे सम्बन्ध एक–दूसरे के साथ जुड़े होते हैं एवं एक-दूसरे को प्रभावित करते हैं। परिवार में एक भी धागा

या सदस्य अगर टूट कर अथवा बिखर जाये तो सारी माला या परिवार ही टूट कर बिखर जाता है। इसलिए पारिवारिक संस्था सामाजिक जीवन की एक धुरी है जिसमें व्यक्तिगत स्वार्थों का त्याग करके ही परिवार को टुटने से बचाया जा सकता है। कमल कुमार के कथा साहित्य में राजनीति व परिवार की संस्था का चित्रण बखूबी मिलता है । वहीं शिक्षण और स्वास्थ्य संस्थाओं का वर्णन भी मिलता है। आज इन संस्थाओं का स्वरूप जैसे बिगड़ता जा रहा है और इनका कैसे विघटन होता जा रहा है उसका वर्णन लेखिका के कथा - साहित्य में देखा जा सकता है।

4.1.1 पारिवारिक विघटन की समस्या

वर्तमान में परिवार विघटन की समस्या अधिक देखने को मिलती है। यह समस्या प्रत्येक परिवार या घर में देखा जाता है। जैसे कि आज समाज में परिवार का विघटन - टूटने की समस्या देखने को मिल रही है। उसी का चित्रण ही लेखिका के साहित्य में हुआ है। सम्बन्धों में वैसी प्रगाढ़ता, अपनापन, आत्मीयता देखने को नहीं मिलती है जैसे पहले देखने को मिलती थी । आज मनुष्य इतना स्वार्थी व महत्वाकांक्षी हो गया है कि उसने अपने परिवार में भी वैसी ही कड़वाहट और विष भर दिया है जिससे परिवार का संतुलन बिगड़ चुका है। परिवारों का अस्तित्व अपने स्वार्थ व इच्छाओं के कारण खत्म होने की कगार पर पहुँच गया है।

आधुनिक समाज में प्रत्येक घर के विघटन की समस्या घरेलु हिंसा हो गयी है जो छोटी सी छोटी बात पर परिवार में समस्या खड़ी हो जाती है और वही समस्या विघटन का रूप ले लेती है। भारतीय संसद में घरेलू हिंसा से सम्बन्धित अधिनियम पारित हुआ। जिसमें महिलाओं का संरक्षण करना इसका उद्देश्य है। भारत में घरेलू हिंसा के मामले लगातार बढ़ते जाने के कारण ही " 26 अक्टूबर, 2006 को इसे लागू किया गया।‘‘ [4] कमल कुमार के कथा - साहित्य में

औरतों पर होती घरेलू हिंसा के कई उदाहरण देखने को मिलती है। 'घर - बेघर' कहानी-संग्रह की 'सखियां' कहानी में संतोष का पति उसके साथ दुर्व्यवहार करता है। संतोष के शब्दों में "शीलू-ऽ सारा दिन तो मैं घर में मरू खपूं। मेरा जी कैसा है। मुझे कोई दुख है, कोई तकलीफ है, इससे तो उसका कोई वास्ता ही नहीं । रात में सांड की तरह ऊपर चढ़ जाता है। फिर कहता है ” हरामजादी कैसी अकड़ी पड़ी है । रात कहती है, तु सारी ठंडी औरत लकड़ी की तरह बेजान । जा मर यहाँ से।" उसने मुझे पलंग से नीचे धकेला था और पास पड़ी बेल्ट घुमाकर मारी थी । मत्था, बख्खी और टांग छिल गई।"[5] परिवार में स्त्री के साथ गाली-गलौच करना, उसे मारना - पीटना सब कानून की दृष्टि में अपराध है और औरत के खिलाफ अन्याय है ।

‘पहचान' कहानी-संग्रह की 'पहचान' कहानी में नायिका की सास भी अपने पति की घरेलू हिंसा का शिकार है। "तू नहीं जानती बहू . ये बौड़म अब कैसा चुप्पा बना बैठा है कम नहीं सताया था इसने मुझे .... ये निशान देखती है . ये इसी की मरदानगी है । .. चुल्हे से जलती लकड़ी उठाकर दनादन पीठ दाग दी।‘‘[6] पत्नी के प्रति कोई दयाभाव मन में न लाकर पतियों द्वारा हिंसक व्यवहार किया जाता है। और मर्दानगी का प्रमाण दिया जाता है। 'घर' बेघर' कहानी-संग्रह की 'पालतू' कहानी में शकुंतला का पति जब-तब पत्नी के साथ मार-पीट करता रहता है। रामेश्वर का मानना है कि अगर प्यार बीवी से करेगा तो मारेगा भी तो बीवी को ही। "क्यों लाड़ तुझे करूँगा और मारने क्या पड़ोसी की औरत को जाऊँगा? प्यार करूँगा तो मारूँगा भी तुझे । तू मेरी बीवी नही है क्या ? .... रामेश्वर ने पास पड़ी अनिल की हॉंकी उठाई और दे मारी । हॉंकी माथे पर लगी थी, खून बहने लगा था ।"[7] इस तरह पतियों द्वारा पत्नियों को मारना अपना अधिकार समझा जाता है। पतियों का यह व्यवहार औरतों को न सिर्फ कष्ट पहुँचाता है बल्कि परिवार को तोड़ने का काम भी करता है। क्योंकि फिर पत्नियों के मन में पतियों के लिये

कोई इज्जत का भाव नहीं रह जाता। औरतों के साथ यह घटिया व्यवहार हर वर्ग में देखने को मिलता है। गरीब-अमीर अनपढ़ पढ़ी-लिखी हर वर्ग की औरत को यह सब झेलना पड़ता है।

'वैलेन्टाइन डे' की 'विस्थापित' कहानी में नीरू 'यह खबर नहीं' उपन्यास में अमृता पढ़ी-लिखी युवतियाँ घरेलू हिंसा का शिकार होती हैं। 'अपार्थ' उपन्यास में तो अशोक की बहन 'निर्मला को उसके ससुराल वाले मौत के मुँह में पहुँचा देते हैं। "एक दिन अचानक निम्मा दीदी घर आ पहुँची अकेली। उनकी आँखे गड्ढों में धस गयी थी, चेहरा सूखा और निचुड़ा हुआ था। चलते-चलते उन्हें चक्कर आ जाता था। माँ को उन्होंने अपनी पीठ उघाड़कर दिखायी थी चकते के निशान थे । ढांगो के जख्मों में पस पड़ गई थी। .पीठ पर नीली ..महीने-भर बाद उनके मरने की ख़बर आयी थी । लेकिन वह जानता था, माँ-पिता जी सब जानते थे, वह मरी नहीं थी, उन्हें मारा गया था ।"[8] निर्मला का मर जाना भी समाज में ऐसी वृत्ति के शिकार लोगों को जगा नहीं पाया और यह हिंसा आज भी हो रही है। जिसे लेखिका ने उद्घाटित करने की कोशिश की है। ऐसे पतियों की इज्जत पत्नियों द्वारा नहीं की जाती जिसका प्रमाण 'घर बेघर' कहानी - संग्रह की 'पालतू' कहानी में शकुंतला नामक पात्र के रूप में देखने को मिलता है ।- "मैडम आप क्या सोचती है कि औरते ऐसे आदमी की इज्जत करती है? कभी नहीं । वे समझती है पालतू कुत्ता है और उसकी रखवाली के लिये है। यूं तो घर का कुत्ता भी कभी-कभार काट ही लेता है | आप बता रही थी कि आपके अल्सेशियन ने भी एक बार आपको काट खाया था और इंजेक्शन लगवाने पड़े थे।"[9] पारिवारिक संख्या का स्वरुप पतियों के व्यवहार के कारण बदलता जा रहा है। पति-पत्नी के प्रति अपनी सोच को नहीं बदलना चाहते जिस कारण पत्नियाँ भी फिर पतियों को भारतीय संस्कृति के अनुरूप ईश्वर का दर्जा नहीं देती हैं। इस कारण परिवार रूपी संस्था में विघटन होना स्वाभाविक ही है।

परिवार में विघटन का कारण एक यह भी है कि दाम्पत्य सम्बन्धों में माधुर्य का अभाव व रिश्ता सिर्फ शरीर तक सीमित होती है। पति-पत्नी के रिश्ते में माधुर्य का लोप होता जा रहा है। उनके बीच के सम्बन्धों में सिर्फ देह ही प्रमुख हो गई है। भारतीय पश्चिम की राह पर चलकर वासनाओं में महत्व देकर दिशा से भटक रहे हैं। "पाश्चात्य देशों में परिवार प्रायः कामेच्छा की पूर्ति का साधन होता है किन्तु भारतीय परिवार का महत्व - केवल वासना की पूर्ति नहीं है। भारतीय परिवार धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष का साधन है ।'[10] भारतीय परिवारों में पश्चिम की तरह वासना की पूर्ति करना ही परिवार का लक्ष्य न था किन्तु आज - पति-पत्नी के रिश्तों में देह को अधिक महत्व दिया जाने लगा है। कमल कुमार के कथा - साहित्य में ऐसे उदाहरण हमें देखने को मिलते हैं। यहाँ पति-पत्नी के सम्बन्ध प्यार की जगह कड़वाहट से भरे पड़े हैं। 'पहचान' कहानी संग्रह की 'पहचान' कहानी में नायिका का पति के साथ रिश्ता सिर्फ रात में वासना की पूर्ति के निमित्त मात्र था।" उसका वजूद सुरेश के लिये उसकी दिनचर्या का आखिरी हिस्सा था। .. संवादहीन पहचानहीन। बिना संवाद या स्फुरण के ..इच्छा या अनिच्छा जाने उसकी हथेलियाँ स्त्री शरीर को दबोचती...... .. दाबती गूंथती। . जैसे वह कोई मशीन का पुर्जा हो। ठक से बटन दबाया और उसका अंग-अंग उसे समोने लगे। उसकी जिन्दगी में उसकी जरुरत पेट व पेट के नीचे को थी। क्या इसी में उसके पत्नी होने का सुख, सुरक्षा व जिंदगी की धड़कन है। उसका मन वितृष्णा भय व दुःख से बिलबिला उठा ."[11] इस तरह पति-पत्नी का रिश्ता मात्र देह की तार से जुड़ा था। जब तक यह तार जुड़ी रहता है उनका रिश्ता भी निभता रहता है।

'कमल कुमार की लोकप्रिय कहानी - संग्रह की 'लहाश' कहानी में विद्या का पति ज़बरन उसके साथ सम्बन्ध बनाता है। बिना उसकी इच्छा जाने उस पर अपनी मर्जी लादता है। "विद्या ने धीमा प्रतिवाद किया था, "ना-S आज नहीं। बहुत थकी हूँ। एक पल के लिये उसके हाथ रुके थे। फिर उसने धोती सामने से हटाकर उसके बलाउज को खींचा था। .. वह कुछ देर तक उसके

बदन से गरमी की चाहत में भकटता रहा, फिर गुस्से से खदबदाया था, लहाश की तरह लेट जाती हो ठंडी और बेजान।'[12] यहाँ भी पति की जरूरत-पत्नी के शरीर तक ही सीमित है उसे उसकी भावना से कोई सरोकार नहीं है।

इसी तरह की कहानी 'फॉसिल' की नायिका गार्गी की है। (पृ० संख्या - 8) जिसका पति विक्रम उसे शारीरिक जरूरतों की पूर्ति के लिये इस्तेमाल करता है। 'घर-बेघर' कहानी - संग्रह में 'सखियाँ' कहानी की संतोष, शीला से अपने मन की बात करती हुयी कहती है- "शीलू आदमी तो औरत को कुछ और समझता ही नहीं। दिनभर वह बिना थके, बिना रूके, घर-गृहस्थी संभाले और रात में आदमी के सामने अपनी देह पेश कर दे पर शीला औरत को तो कुछ और भी चाहिये न। उसके पास देह है तो मन भी है। मन है तो उसकी इच्छायें उसकी उमंगे भी हैं। उसका दिमाग है तो उसकी अपनी सोच भी होती है।"[13] इस तरह सिर्फ देह ही पति-पत्नी के रिश्ते में सब कुछ नहीं होती उनका एक-दूसरे के मन को समझना उनकी भावनाओं की कद्र करना भी उतना ही ज़रूरी है।

'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में कृष्णा और डॉ० शाह का रिश्ता भी कुछ ऐसा ही है। कृष्णा के शब्दों में "डॉक्टर का उससे भावहीन सम्बन्ध भी क्या शारीरिक जरुरत सेक्स ही है। वह बिना उसकी इच्छा जाने और उस पर अपनी इच्छा की प्रतिक्रिया की परवाह किये सवार हो जाता। छः आठ बार धकिया कर नीचे उतर आता और करवट लेकर सो जाता।"[14] इस तरह कृष्णा के साथ पति का सम्बन्ध सिर्फ यौन सम्बन्ध तक ही था। उसकी चेतना एवं संवेदना से पति का कोई सम्बन्ध नहीं था।

'अपार्थ' उपन्यास का नायक 'अशोक' अपनी पत्नी सुधा के वासना के मोह में उसे छोड़कर बॉस के साथ भाग जाना बर्दाश्त नहीं कर पाता। पत्नी सुधा की काम वासना की

भावना का चित्रण करता हुआ कहता है ।" संभोग में विद्युत की तरह दीप्त समाधि का बिन्दु जहाँ शरीर– शरीर न रहकर आत्मरुप हो जाता है ..वहीं लुप्त है । उससे वंचित हो वासना.. ......पंकिल पंक को ..लथेड़ती है .... धंसाती है..... .. उसने उसे वर्जित . नीचे नीचे और नीचे । उसने काम की दिव्यता नष्ट की और गार्हित व निंदित किया।[15] अशोक की दृष्टि से लेखिका के विचारों को ज्ञान होता है जो सिर्फ काम को वासना तक सीमित नहीं मानती बल्कि यह एक पवित्र भावना है जो पति-पत्नी को जोड़कर परिवार को आगे बढ़ाने में सहायक होती है।

4.1.2. पारिवारिक एवं परस्पर सम्बन्धों की समस्या

परिवार में माता -पिता द्वारा बच्चों के प्रति उचित भूमिका न निभा पाना भी सम्बन्धों की समस्या है। परिवार जैसी संस्था में बच्चों की आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये निर्मित होती किन्तु ऐसा देखने में आता है कि परिवार बच्चों की जरूरतों को ही समझ नहीं पाता। महेन्द्र कुमार वर्मा लिखते हैं "भारतीय परिवार में माता तथा पिता दोनों का अत्यधिक महत्व है । एक के भी अभाव में परिवार की गाड़ी सुचारु रूप से नहीं चलती। बालकों के स्वस्थ और सर्वांगीण विकास के लिये माता की ममता और प्यार के साथ ही पिता का अनुशासन और स्नेह भी परम आवश्यक होता है। माता–साक्षात् पृथ्वी की मूर्ति होती हैं तथा पिता ब्रह्मा की मूर्ति होता है।"[16] इस प्रकार परिवार को बनाने में माता-पिता दोनों ही महत्त्वपूर्ण होते है किन्तु कमल कुमार के कथा-साहित्य में माता-पिता अपनी भूमिका का निर्वहन ठीक तरह से नहीं कर पाते जिस कारण बच्चों के जीवन पर उसका प्रभाव परिलक्षित होता है ।

‘अपार्थ’ उपन्यास में अशोक के माता-पिता के द्वारा उसे दूसरे भाई-बहनों के मुकाबले हमेशा उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता रहा । जिस कारण अशोक के व्यक्तित्व का विकास न हो सका। बाल-मन पर माता के प्यार न मिलने का गहरा असर हुआ बचपन से वो यही समझता रहा कि अगर कोई अजनबी पैदा बच्चे को छू देता है तो माँ उसे फिर प्यार नहीं करती – "माँ,

अगर कोई बच्चे को छू दे तो माँ भी प्यार नहीं करती उसे बिस्तर से गिरा देती है.. ..?'[17] पढ़ाई में कमजोर और सेहत में गिरावट के कारण पड़ोसियों से भी ताने सुनता है। आस-पास के लोग अशोक और उसकी माँ को उसे लेकर बातें सुनाते है ।"अरी इस यतीम-जैसे को कहाँ से उठा लायी .यह तो तनिका भी तेरा बेटा नहीं लगता ।

"लड़के की जात है ....क्या होगा इसका?" होना क्या था ..माँजेगा बर्तन मुआ........ | नहीं पढ़ेगा तने ।[18] इस तरह माँ भी औरों के साथ मिलकर अपने बच्चे की बेइज्जती करती है। बच्चे के कोमल मन पर उन शब्दों का क्या असर होगा इसका जरा भी चिंता नहीं करती। आज अशोक जो भी है जैसा भी है जो बना उसका कारण उसकी माँ ही थी । अशोक कहता है- "मेरी असफलता का प्रतिरुप .... माँ । तुम वह धार हो, जिसपर मेरा जीवन बार - बार कटता रहा .. बूँद - बूँद लहू रिसता रहा । तुम्हारे कारण उपजी आत्म-ग्लानि से गलित - जीवन के . आज मैं जो भी हूँ........ जहाँ भी हूँ.. हर पल मैं लज्जा से लिथड़ता तुम्हारे कारण ..सिर्फ तुम्हारे ही कारण ."[19] परिवार के कारण ही उसका व्यक्तित्व खंडित रहा। आज उसकी जो मानसिकता है उसे गढ़ने में उसकी माँ का हाथ है। अपनेपन व प्यार की उम्मीद सारी जिंदगी अपनों से लगाता रहा किन्तु निराशा ही हाथ लगी और अशोक अंत में आत्महत्या कर दुनिया से रुखसत हो गया । 'आवर्तन' उपन्यास में अमर की पत्नी पार्वती और अपने बच्चों के प्रति अपनी जिम्मेदारी का निर्वहन नहीं करता । उसकी इस गलती का भुगतान उसके बच्चे की मौत से होता है। पार्वती सारी रात बच्चे की दवा - दारु करती रही । लाख बार अमर की मिन्नत की पर वो तो टस से मस न हुआ और बच्चा सुबह तक आँखे बंद कर गया "सवेरे-सार पार्वती की दहाड़ सुनकर उसकी नींद खुली थी। हड़बड़ा कर वह उठा तो उसने देखा विभु की आँखे पलट गयी थी, हाथ-पैर लस्त हो गये थे और गर्दन एक तरफ को लटक गयी थी।"[20] पिता की जिम्मेदरी न निभाता अमर अपने ही अहं में पार्वती की बात अनसुनी कर देता रहा जिस कारण विभु की मौत हो गयी

। 'घर - बेघर' कहानी-संग्रह की 'मुझे माफ कर दो' (पृष्ठ -85) कहानी में पति या पिता की भूमिका परिवार के प्रति निभाने के कारण ही बच्चा उसकी हाथ से निकल गया और बुरी संगति में फँस गया। इसी तरह 'हैमबरगर' उपन्यास में भी रतीन्द्र के माता- पिता बच्चों के प्रति भूमिका का उचित ढंग से निर्वाह नहीं करते हैं।

स्त्रियों को लेकर पवित्रता की धारणा भी एक परस्पर सम्बन्धों की समस्या है जो समाज में स्त्रियों का पवित्र होना बहुत आवश्यक माना जाता है। स्त्रियाँ विवाह के पश्चात् केवल अपने पति को ही अपना मन व तन समर्पित कर सकती हैं। उनके लिये उनका पति ही सब कुछ होना चाहिये। स्त्रियों को न सिर्फ पर-पुरुष के साये से बचना होगा बल्कि नर, पशु, पक्षी व वृक्ष के साए से भी दूर रहना चाहिये। स्त्रियाँ यदि इन कठोर नियमों का पालन मन से नहीं करती और भूल कर बैठती हैं तो वो अपवित्र मानी जायेंगी। लेखिका ने 'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में स्त्रियों की पवित्रता की धारणा को द्रौपदी और माद्या चट के माध्यम से उघाड़ा है। महाभारत की कथा के अनुसार द्रौपदी सत्यक्रिया के दौरान सभी सत्य उद्घाटित कर देती है लेकिन एक सत्य नहीं बताती जिस कारण पका हुआ आम वृक्ष से नहीं गिरता—" उपस्थित जनसमुदाय ने द्रौपदी से सत्य जानना चाहा तो द्रौपदी को अपने बचपन की एक घटना याद आई। एक गाय ने बछड़े को जन्म दिया जिसे वह बचपन में अपने कन्धे पर उठाकर ले गई। उस नये जन्में बछड़े ने द्रौपदी के कन्धे पर मूत दिया। इस वजह से अपवित्र हो गयी थी।"[21] दिवाल में चट एवं मादा चटका के आपस में संवाद की कथा है। मादा चट तूफ़ान में फँस जाने के कारण सुबह वन से लौटती है। सुबह चट मादा को घोंसले के भीतर नहीं आने देता क्योंकि वो अपवित्र हो गयी थी लेकिन चट मादा बताती है कि "वह पवित्र हैं, वह तो नरवृक्ष के पास तक नहीं गई। उसने रात्रि स्त्री जाति के वृक्ष इमली पर बैठकर बिताई है।"[22] यह दोनों कथाएँ ही नारी को पति के अतिरिक्त किसी भी पुरुष व नर पक्षी, पशु या वृक्ष के समीप जाने से रोकती है। अगर स्त्री इन सबका पालन न करे

तो उसे नर्क जैसा जीवन भोगना पड़ेगा नारी को बंधनों में ऐसा जकड़ कर रखा जाता है। जिससे उनकी खुद की सोचने-समझने की शक्ति ही चली जाये और वह पुरुष के पीछे-पीछे उसका अनुकरण करती रहें।

लेखिका ने पुरुषों के हाथों बेइज्जत होती नारी का चित्र उघाड़ा है। 'पहचान' कहानी-संग्रह की 'आखेट' कहानी की पात्र पति अपनी पत्नी के शहर को गाँव से कमतर आँकने पर गुस्से से उबलना शुरू कर देती है। "बस - बस......बहुत बड़- बड़ न कर। सिर पर छत है ना शुक्र कर भगवान का बच्चों की पढ़ाई-लिखाई का भी सोचा है या तेरे—मेरे बाप दादों की तरह मुँह सवेरे से शाम तक हुलारे-हुर्रा चिल्लाते ढोर की तरह जिंदगी ढोते रहते......कभी सूखा.....कभी बाढ़ .भुखमरी। यहाँ शहर में पढ़-लिख जायेंगे तो आदमी बन जायेंगे। जाहिल कहीं की |[23] पति, पत्नी के मुँह से सच को सुनना ही नहीं चाहता। इसलिए उसे गुस्से में ऐसी जली-कटी सुनाता है। जिससे कि पत्नी को अपनी औकात याद आ जाये और वह पति को कभी आगे से ऐसी बात कहने की हिम्मत न कर सकें। "फिर वहीं से शुरू" कहानी-संग्रह की ही "ऊपर वाले की कृपा' कहानी में पत्नी रामवती रामदीन से अभी कुछ पूछने के लिये मुँह खोलने लगती है कि तभी रामदीन गुस्से से मुझे बोलने लगता है - " जादी जवाब सवाल ना करा कर तू सी दे जद तनौ कहया बस |[24] रामवती का सवाल पूछने की कोशिश करना ही रामदीन को आग बबूला कर देता है। रामदीन सब कुछ भूलकर पत्नी को अपनी मर्यादा सिखाने बैठ जाता है।

सम्बन्ध को लेकर 'घर - बेघर' कहानी - संग्रह की 'मुझे माफ कर दो' कहानी में अलका का पति अपनी जिम्मेदारी न तो घर के प्रति निभाता है न ही बच्चों के प्रति उसका ऑफिस में सेक्रेटरी रोजी से अफेयर था और अब तो वह रोज़ रोजी जैसी कई औरतों से मिलता था। जिंदगी के अंतिम चरण में जाकर उसे अपनी गलती का एहसास होता है और अपने किये की अपनी पत्नी से माफी मांगता है। "मुझे माफ कर दो अलका मैं ही दोषी हूँ। मेरी ही राह पर चलकर सुरेश

ने अपना नाश किया ...... मंजू भी गलत रास्ते पर चल पड़ी। मुझे क्या पता था ऐसा होगा। सारा परिवार बिखर गया और तुम जैसी सती औरत का दिल दुखाया।'[25] इस तरह अलका से अपने सारे गुनाहों की माफी माँगता है। पत्नी 25 वर्षों से जिस तकलीफ में थी उसे भुलाकर उसे माफ़ कर देती है। अलका जब पति को अपने और सहगल के रिश्ते का सच बताकर उससे माफी माँगती है तो पति कहता है- "कमीनी- बदज़ात औरत! मैं तुम्हें गया क्या-क्या नहीं समझता रहा। तुम्हे देवी, सती- साध्वी मानता रहा और तुम धुन्नी औरत पतिव्रता का खोल चढ़ाये रहीं। तुम तो वेश्या से भी गई - बीती हो ....थू...... उसने आक्थू करके वहीं फर्श पर थूका था ....दफा हो जा यहाँ से धकियाकर वह तीर सा कमरे से निकल गया था।[26] पत्नी के एक अपराध को जो पति के ही व्यवहार के कारण संभव हुआ उसे पति द्वारा माफ न करके उसे वेश्या कहकर घर से निकल जाने का फरमान जारी कर दिया गया।

4.2. सामाजिक समस्याएँ

कमल कुमार के कथा - साहित्य में समाज में विभिन्न स्थितियों के आधार पर जो भेद किया जाता है। उसे लेकर लिंग, जाति, प्रजाति, रंगभेद, अर्थ व भाषा के आधार पर सामाजिक समस्याओं का वर्गीकरण किया गया है। इन आधारों पर समाज कैसे बंट जाता है और उनमें कैसे एक-दूसरे के प्रति वैमनस्य की भावना पनपने लगती है। इसका चित्रण लेखिका ने बखूबी किया है। सामाजिक समस्याओं से अभिप्राय है जब समाज में किन्ही आधारों पर स्तर निर्धारित कर दिये जाते है जिससें व्यक्ति की प्रस्थिति का निर्धारण होता है। प्रत्येक समाज में चाहे उस समाज की संरचना कैसी भी रही हो, वहाँ सामाजिक समस्या देखने को मिल ही जाती है। साम्यवादी देशों में किसी भी आधार पर लोगों को न बाँटने की बातें की गई थी, लेकिन वहाँ भी व्यक्तियों के मध्य योग्यता के आधार पर सामाजिक स्तरीकरण मिल जाता है। सामाजिक समस्या के दौरान समाज कई हिस्से में बँट जाता है। समाज में समस्या-ऊँच-नीच और भेदभाव

के आधार पर यह देखने को मिलता है। इसमें जो व्यक्ति उच्च स्थिति को प्राप्त होता है वो निम्न स्थिति को प्राप्त व्यक्ति के साथ भेदभाव करने लगता है। सामाजिक समस्या लिंग, आयु, जाति, प्रजाति रंगभेद, भाषा व अर्थ इत्यादि आधारों पर समाज में मिलता है।

भारतीय समाज में सामाजिक समस्या जातिप्रथा एक बहुत विकट समस्या है। जाति-पाति के आधार पर आये दिन झगड़े होते रहते हैं। जाति बिरादरी और ऊँच-नीच का भेदभाव व्यक्ति को प्रायः इतना कमजोर बेजान और जर्जर बना डालता है कि उसका समूचा व्यक्तित्व ही नहीं, मनुष्यता के मान-मूल्य भी खतरे में पड़ जाते हैं। स्वामी दयानन्द सरस्वती, विवेकानन्द, बाल गंगाधर तिलक तथा महात्मा गाँधी आदि समाज सुधारकों ने जातिगत भेदभाव तथा मानव के प्रति अस्पृश्यता की कठोर आलोचना करते हुये उसमें सुधार के तमाम प्रयत्न किये थे। संविधान ने भी समानता का अधिकार दिया है। जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति जाति, धर्म के भेद के बिना अपने जीवन को विकसित करने के लिये तमाम सुविधाएं प्राप्त कर सकता है। संविधान के अनु0 15 के अनुसार दीपक वर्मा लिखते हैं "राज्य द्वारा धर्म मूलवंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान आदि के आधार पर नागरिकों के प्रति जीवन के किसी क्षेत्र में पक्षपात नहीं किया जायेगा।'[27] किन्तु इसके बावजूद भी सबको वह सम्मान प्राप्त नहीं है जो होना चाहिये। इसके पीछे जाने अनजाने कई कारण हैं। रुढ़िवादिता एक कारण हो सकता है। सदियों से चली आ रही जाति -प्रथा, ऊँच-नीच को शिक्षित समाज में भी हम ज्यों का त्यों देख रहे हैं।

हम भारतीय एक दूसरे से परिचित होने के बाद भी उसकी जाति जानने का प्रयास करते हैं। उसी के आधार पर अपना दृष्टिकोण व व्यवहार निश्चित करते हैं। यहाँ तक कि घरों में काम करने वालों के बर्तन अलग कर दिये जाते हैं। उनके साथ बैठना–उठना या मनुष्यों जैसा व्यवहार तो दूर की बात है उन्हें एक अलग ही दुनिया का प्राणी मानकर दुर्व्यवहार करना तथाकथित उच्च जाति के लोगों का स्वभाव सा बन गया है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता हैं कि जातिगत

भेदभाव सामन्ती सभ्यता की देन है जिसमें मनुष्यता लेश मात्र भी नहीं है। 'सरोकार' कहानी में एक मजदूर जो बीमार होने के बावजूद मजदूरी कर रहा है। घर की बहू मानी चाय की प्याली उसे दे तो देती है किन्तु सास की फटकार - "तेरी पढ़ाई-लिखाई क्या हुई बहू.. उसे कप पकड़ा दिया ....कौन जात का है ....उस पर सवेरे से खों खों .. क्या हुआ है लगा रक्खी है। पता नहीं मरे के फेफड़ों में कीड़े पड़े है ....क्या हुआ है .... छूत लगी तो ....डा।"[28] यह उच्च जाति के लोगों की मानसिकता को उजागर करता है। इस प्रकार की सोच हमारे संविधान की धज्जियाँ उड़ा देती है। गरीब, कमजोर व्यक्ति विरोध करना नहीं जानता किन्तु एक घुटन जरुर महसूस करता है। उसे मनुष्यतापूर्ण व्यवहार की अपेक्षा रहती है किन्तु जो विसंगति हमारी जड़ो में घर कर गई है उसे उखाड़ फेंकना सहज नहीं। इसी का परिणाम है कि आज तथा कथित निम्न जाति का व्यक्ति भी अपने नाम के साथ उच्च जाति जोड़ कर सम्मान पूर्वक जीवन जीने की इच्छा रखता है और ऐसा करता भी है।

भारत में सामाजिक समस्या जाति के आधार पर भेदभाव देखने को मिलता है। भारत में सामाजिक समस्या एक जाति आधारित है। प्रायः समाज में ऊँची जाति के लोगों द्वारा निम्न जाति के लोगों के साथ भेदभाव किया जाता है। भारत में कितने ही ऐसे क्षेत्र है जहाँ पर निम्न जाति के लोगों के खान-पान पेशे पर कई तरह के प्रतिबन्ध हैं। कुछ ऐसी निम्न जातियाँ है जिन्हें मंदिरों में प्रवेश का निषेध है। दलित औरतों को भारत के कुछ क्षेत्रों में अपना ऊर्ध्व भाग ढक कर नहीं चलने दिया जाता था। प्रायः ऊँची जाति के लोगों को अगर नीची जाती के लोग छू ले तो अछूत का लग जाना जैसे शब्द कानों में सुनाई देते हैं। विवाह के अवसरों पर छोटी जाति के लोग घोड़ी पर दूल्हे को नहीं बिठा सकते क्योंकि भारत के कई राज्यों में ऊँची जाति का इतना दबदबा देखने को मिलता है जो नीची जाति को अपने समान प्रस्थिति में नहीं देखना चाहते।

भारत के छिटपुट राज्यों से जाति आधारित भेदभाव की घटनायें हमारे सामने आती है। यहाँ उच्च जाति के लोग छोटी जाति के लोगों को प्रताड़ित करते हैं।

समाज में एक समस्या यह भी रहन-सहन के आधार पर भेदभाव है। समाज में जातिगत भेदभाव इस तरह इंसान पर हावी है कि उच्च जाति के लोग प्रायः गाँवों में निम्न जाति के लोगों के साथ रहना पसन्द नहीं करते हैं। इसी कारणवश निम्न जाति के लोगों द्वारा अलग बस्ती बनाकर गांव से बाहर रहा जाता है। सरकार द्वारा इनके कल्याण के लिए जो योजनाएं बनाई जाती हैं वो इन तक नहीं पहुंचती हैं। इनका जीवन स्तर इसी कारण कभी उठ नहीं पाता। एक ही छत के नीचे इंसान और पशु इकट्ठे रहते खाते-पीते हैं। घरों की सही व्यवस्था न होने के कारण दलित बीमारियों से घिर जाते हैं।

कमल कुमार ने 'पहचान' कहानी - संग्रह की 'परिणति' कहानी में दलितों की अलग बस्ती के चित्र हमारे सामने पेश किये हैं। चेचक के मरीजों की तलाश करने जब अनिल निकलता है तो इस बीमारी से ग्रस्त दो मरीज उसे गांव से बाहर बस्ती में रहते दलितों में मिले। "घूमता-घामता गांव से कुछ दूर निकल आया था। देखा यहां भी छोटी बस्ती है पता चला हरिजन बस्ती है अर्थात् गांवों में हरिजन अलग से रहते हैं। अधिकतर यहां घर घास-फूस के और कच्चे थे। गांव के क्रिया कलापों से यहाँ इस बस्ती में वातावरण अलग था। न तो इन तक कल्याण सेवायें पहुंच पाती थी। न सुधार आंदोलन। एक - आध घर से बच्चे स्कूलों में पढ़ने जाते थे। रहने का स्थान मैला और तंग था। इसी गांव में जहां एक परिवार के पास बैठक, जनाना तथा पशुओं के लिए अलग से ओबरे थें। वहां इनके पास ले देकर एक ही छत थी। अपढ़ होने से बीमारी जैसी हालत में भी आइसोलेशन फॉलो नहीं करते थें। निपट गंवार से थे बात भी मान जाते थे। लंबे-चौड़े आश्वासनों के बाद भी तरक्की के रास्ते बंद थे। बेजुबान कीड़ों से नर जीव। वर्ण व्यवस्था का यह घिनौना रूप। इंसानों की हालत इस बस्तियों में पशुओं के समान थी। इंसान द्वारा जाति

व्यवस्था के जरिए किसी की उत्कृष्ट तो किसी को निकृष्ट स्थान देना मानवता के विरूद्ध है। इंसान को इंसान का दर्जा न देना उनके साथ अन्याय करना है।"[29]

'पहचान' कहानी-संग्रह की 'परिणति' कहानी में नायक अनिल एक और हरिजन बस्ती में जाता है जहाँ उसे चेचक का एक और मरीज़ मिल जाता है- "गाँव के अंतिम छोर पर दसस-बीस झोपड़ों का एक गुच्छा था .... यह भी हरिजन परिवार था–यानि कि इनके पुरखे एक थे। पाँच-छ: भाईयों की तीसरी-चौथी पीढ़ी द्वारा बसाई गई बस्ती। घास-फूस और कच्ची ईंटों और मिट्टी से बने झोंपड़े थे।... खटोले पर एक दसेक साल का बच्चा बुखार से निढाल था। चेहरा तमतमाया हुआ।"[30] इस प्रकार हरिजन लोग पशुओं से भी गया बीता जीवन जीते हैं। जाति के आधार पर जीवन भर उनके साथ भेदभाव किया जाता है और मूलभूत जरुरतों से दूर कर दिया जाता है।

4.2.1 - विवाह - तलाक की समस्या

भारतीय परिवार में समाज की दशा- दिशा दोनों देखा जा सकता है जिसमें समाज के नियमों का पालन करना पड़ता है। इस समाज में समाज के कुछ प्रतिबद्ध नियम है जो न चाहकर भी नियमों का पालन करना है। सृष्टि सृजन हेतु विवाह का होना एक अनिवार्य शर्त है। विवाह होने के पश्चात् सम्बन्धों का ठीक तरह से निर्वहन न होना तलाक की समस्या खड़ी हो जाती है। ये समस्या स्त्री और पुरुष दोनों की ओर से हो सकता है। स्त्री हो या पुरुष सभी को सामाजिक सम्बन्धों के नियमों को मानना ही होता है। कभी तो समस्या ससुराल से होती है तो कभी माइका से कभी दोनों पक्ष जिम्मेदार होते हैं। विवाह एवं तलाक के बीच अहं अपना स्थान बना लेता है जिससे तलाक की समस्या हो जाती है। इस तरह समय की वेगवती धारा ने नारी की सोच को परिवर्तित कर उसे जागरूक बनाया। उसके चिन्तन के दायरे को विस्तृत किया। जिसके कारण वह अपने अधिकार और कर्तव्य के प्रति अत्यधिक सजग हो गई।

लेखिका का कथा साहित्य नारी सशक्तिकरण की दिशा में मील का पत्थर है। ये नारी की आदर्शवादिता को उद्घाटित करती है तो नारी सुलभ कमजोरियों का उल्लेख करना भी नहीं भूलती। इनके कथा साहित्य में नारी जीवन के श्वेत - स्याह सभी पहलू उजागर हुए हैं जो किसी पूर्वाग्रह या दुराग्रह से मुक्त, तटस्थ व निर्भिक चरित्रांकन है। नारी जीवन के संघर्ष का जीवंत दस्तावेज इनके कथा - साहित्य में मिलता है। इनके कथा साहित्य में नारी जहां अपने अस्तित्व व गरिमा को पहचानने की क्षमता पाती है वहीं पितृसत्तात्मक समाज की निरंकुशता से आजाद होने का साहस भी प्राप्त करती है। विवाह का सामंती ढांचा एवं पत्नी का दोयम स्तर समाज केंद्रीत समस्या है। 'फॉसिल' में पुरूष सत्तात्मक सामाजिक मनोवृत्ति की शिकार एक पढ़ी-लिखी लड़की की त्रासदी और प्रतिरोध की कहानी है। फॉसिल का अर्थ - जीवाश्म जमीन में दबी हुयी प्राचीन काल की कोई वस्तु या जीव का पिंजर । इसमें लेखिका ने हड़प्पा-मोहन जोदड़ों की खुदाई के रूपक के सहारे पुरूष वर्चस्व और स्त्री उत्पीड़न के इतिहास में झांकने की कोशिश की है। यह कहानी पुरातत्व रिसर्च इंस्टीट्यूट की प्रतिभावान शोध छात्रा गार्गी सिंह की त्रासदी को व्यक्त करती है। जब उसकी इच्छा के विरूद्ध घर बुलाकर शादी कर दी जाती है। उसे सोचने समझने का समय ही नहीं दिया जाता । बस यही कह दिया जाता है कि लड़कियों के विवाह का यही रिवाज़ है हमारे यहां ।

ससुराल भी ऐसा जहां घर की पूरी व्यवस्था संकीर्ण और सामंतवादी है । पुरूष वर्चस्व की मध्यकालीन मनोवृत्ति के रहते अंधी बर्बर परम्पराएँ ज्यों की त्यों चल रही हैं। ऐसी जगह गार्गी अपनी जिन्दगी के बीस वर्ष गुजारती है। पति की प्रवृत्ति भी वही कि वह औरत को केवल बच्चा पैदा करने की मशीन और मनोरंजन के साधन से ज्यादा कुछ नहीं समझता । वहाँ से निकलकर वह उसी जगह पहुँच जाती है जहाँ बीस वर्ष पहले वह पुरातत्व विभाग के साथ शोध कार्य कर रही थी। फॉसिल की गार्गी हड़प्पा और मोहन जोदड़ो की स्त्री में अपनी छवि देखती

है। दरअसल हड़प्पा-मोहन जोद्डो की सामाजिक व्यवस्था में स्त्री के प्रोजेक्ट पर रिसर्च कर रही पुरातत्व रिसर्च इंस्टीट्यूट की प्रतिभावान छात्रा गार्गी सिंह बीस साल बाद अपने अधुरे प्रोजेक्ट को पूरा करने का संकल्प लेती है। उसका इस तरह आत्मचेतस होना अपनी स्थिति पर चिंतन करना पुरुष सत्तात्मक समाज के विरुद्ध स्त्री का प्रतिरोध ही कहा जायेगा। गार्गी एक तरह से पुरुष सक्षात्मक समाज के विरुद्ध स्त्री के प्रतिरोध की तरह खड़ी नज़र आती है।

आज की नारी न केवल घर से बाहर कदम रखने की अधिकारी है-बल्कि राष्ट्रीय नेतृत्व के लिये भी वह उतनी ही योग्य है, जितना पुरुष । हमारे देश में नारियों ने ऐसे-ऐसे काम करके दिखाएँ है कि नारी में बहुत साहस, समझ और राष्ट्र सेवा की भावना दिखाई देती है। अपनी विभिन्न समस्याओं के हल के लिये किसी संघर्ष या आंदोलन के इतंजार में बैठे रहने के बजाय अपने सीमित साधनों की ऊर्जा और शक्ति संचय करते हुये अपने साथ हो रहे अन्याय के खिलाफ आवाज़ उठाये। अगर वह निरंतर इस ओर गतिशील रहे तो निश्चित रूप से उसका आने वाला भविष्य वर्तमान स्थिति से ज्यादा सुखद होगा। उनके कथा - साहित्य के विभिन्न नारी पात्र कहीं शिक्षा के स्तर पर समाज को बदलने का प्रयास करते हैं तथा कहीं परम्परागत रुढ़ियों का भी विरोध करते हैं।

4.2.2. भूख एवं गरीबी की समस्या

भारत में भूख और गरीबी की समस्या बहुत व्यापक रूप में दिखाई देती है। इसमें सबसे निचले क्रम पर निम्न वर्ग विद्यमान है। निम्न वर्ग में खेतीहर मजदूर घरेलू नौकर आदि शामिल हैं। आर्थिक अभाव के कारण उनका जीवन निम्न स्तर का होता है। मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति में ही सारी जिन्दगी गुजार देते हैं। 'औरत और पोस्टर' कहानी के आवारागर्द लड़के सभी अपनी गरीबी, रुखेपन और खुदरेपन के नीचे मानवीय मूल्यों के आर्द्रता से सम्पन्न हैं।

सभी लड़के किसी न किसी कारण से पढ़ाई छोड़कर पेट की भूख मिटाने के लिए काम करते हैं। बीरू को जब लेखिका ने अंत में पहचान लिया तो वह बोला "हमारा बाप ऑन्टी जी। वो तो कुछ भी नहीं करता। बैठा-ठाला शराब पीता है और माँ को मारता है। माँ की कमाई के पैसे भी झटक लेता है। मेरी कमाई से माँ हम छः जनों का पेट भरती है।"[31] परिवेश की क्रूर परिस्थितियों ने ही उन बच्चों को ऐसा बना दिया है। वह भी पढ़ना चाहते हैं लेकिन कमाई का कोई साधन न होने के कारण उन्हें पढ़ाई बीच में ही छोड़नी पड़ी। दूध में अगर कोई जहर मिला दे तो दूध का क्या कसूर | उन बच्चों ने जैसी फिल्में देखी है अश्लीलता और सेक्स से भरपूर इसमें उनका क्या कसूर? स्थितियाँ ही इंसान को अच्छा या बुरा बनाती हैं कोई भी इंसान जन्म से बुरा नहीं होता है उत्तर आधुनिकता बाज़ार अश्लील चीजों से भरा पड़ा है। मनुष्य के ऊपर अश्लील गीतों का, फिल्मों का असर जल्दी पड़ता है एवं उत्तर आधुनिक बाज़ार इन्हीं चीजों को पहचान कर मनुष्य की संवेदना को कुचल देता है।

निम्न वर्ग रोजगार के लिये सपरिवार रोज़ी-रोटी का जुगाड़ करता और भूख एवं गरीबी में जीवन को बिताता है। इस वर्ग के प्राणी अपना जीवन अभावों में बिताते हैं। सारी जिन्दगी मूल भूत ज़रुरतों को पूरा करने में ही लगे रहते हैं। 'पहचान' कहानी-संग्रह की 'समय - बोध' कहानी में निम्नवर्गीय परिवार का चित्रण लेखिका ने खींचा है "बापू को जो मरकर मुक्त हो गया था और माँ के लिये छोड़ गया था-चार खाली पेट भरने को काम करने वाले हाथ जो खेतों में अनाज उगाते नहीं थे। पिता जी को मरे पाँच महिने हो गए थे। अनाज के सारे मटके खाली हो गये थे। माँ दिन भर दूसरों के खेतों में काम करती। माँ के पीछे वह और उसके पीछे पार्वती और लीला होती। जो कुछ मिलता उससे मुश्किल से पेट भरता।"[32] निम्न वर्ग के घरों की हालत इस कद्र बुरी हो जाती है कि उनके फाके के दिन शुरू हो जाते हैं। इस दौरान मिला हुआ रुखा - सूखा खाना भी उनके लिये बहुत कीमती और लज़ीज होता है—" डबलरोटी के सूखे टूकड़े,

सीले हुये बिस्कुट, दो बासी परांठो का खजाना था। माँ ने दोनों बहनों को जगाया, लो खा लो........ |"[33] 'समय - बोध' कहानी में गौरी को मेम साहब से मिला हुआ खाना खाकर घरवाले संतुष्ट हो जाते हैं क्योंकि यहाँ उन्हें रोटी के लाले पड़ रहे थे। वहाँ पर ये सब खाकर उनकी पेट की क्षुधा कुछ शांत हुयी थी। 'फिर वहीं से शुरू' कहानी - संग्रह की 'ऊपर वाले की कृपा' कहानी में राम दीन निम्न वर्ग का व्यक्ति है जो अपना रोज़गार चलाने के लिये पत्नी रामवती के आभूषंणो को बेचता है- "ज़रुरी बरतनों, मर्तबान, पिर्च-पिआले, चम्मच-गिलास वगैरा के लिये उसे फिर से रामवती की पायल बेचनी पड़ी, पर उसने उसे मना लिया था। जरा-सी दुकानदारी चलन दे, पायल तो क्या, तेरे वास्ते इबकी कंठा बी गढ़वा के दूँगा।"[34] इस वर्ग के पास जो भी कुछ है उसे बेचकर कमाने का ज़रिया ढूँढने की कोशिश करता है। रामदीन भी पत्नी के गहने बेचकर कमाई का साधन बनाने की कोशिश करता है।

रामदीन का बेटा स्कूल से आकर पिता के काम में उनकी मदद करता है—''रामदीन का लड़का पप्पू स्कूल से लौटता तो बाप की मदद करता। बर्तन साफ करता बाजार से सौदा लाता | छोटे-मोटे अनेक काम निपटा देता।"[35] सपरिवार मिलकर आर्थिक अभावों की पूर्ति करने में जुट जाता है ताकि उनके हालात सुधर सकें। इस वर्ग की औरतों द्वारा अपने बच्चों की जरूरतों को पूरा करने के लिए रोज़गार की तलाश की जाती है। रोजगार की सहायता से बच्चों व घर के लिये पैसा मुहैया किया जाता है। 'घर–बेघर' कहानी - संग्रह की 'पालतू' कहानी में शकुंलता काम की तलाश में घर से निकलती है - "यह शकुंतला है, इसे चार-पाँच घंटे का कोई काम चाहिये। घर मैं पैसे की जरुरत है पर छोटे-छोटे बच्चे हैं। सारा दिन नहीं रूक सकती।"[36] घर की जरूरतें औरतों को घर से बाहर काम के लिये आने को मज़बूर करती हैं। 'क्रमशः' कहानी-संग्रह की 'औरत और पोस्टर' कहानी में निम्न वर्ग की बस्ती में गुज़र-बसर करने वाले बच्चें घर व परिवार की जरूरतों के लिये मज़दूरी करते हैं "अब तो मैं नौकरी करता हूँ। . ..

पिच्चर हॉल के सामने पँजाबी के होटर में आँटीजी ।".. .. मेरी कमाई से माँ हम छ: जनों का पेट भरती है।"[37] इस वर्ग में जी रहे लोग अपनी ज़रूरतों को पूरा करने के लिये सपरिवार संघर्ष करते हैं। अपनी रोटी, कपड़ा, मकान जैसी ज़रुरतों को पूरा करने के लिए माता-पिता, बच्चे सब काम में जुट जाते है। प्रस्तुत कहानी में छोटा बच्चा पढ़ाई छोड़कर घर के सदस्यों का पेट भरने की ख़ातिर काम करता है ।

इस तरह कमल कुमार के कथा - साहित्य में अर्थ के कारण उच्च, मध्यम व निम्न वर्गीय लोगों का जैसा जीवन स्तर होता है और शोषक वर्ग कैसे शोषितों का खून चूसता है इसे लेखिका ने साहित्य में अन्याय की पराकाष्ठा के नजरिये से चित्रित किया है। समाज के सभी स्तरों व वर्गों में विभाजन हो जाना राष्ट्र की एकता को ठेस पहुँचाता है। समाज में जितने भी स्तर बनाये गये है उनमें पाये जाने वाले स्तरीकरण को खत्म कर सामाजिक एकता का प्रयत्न किया जा सकता है। लेखिका सभी स्तरों व वर्गों में विभाजित लोगों व भाषा के प्रति अपना नज़रिया बताती हुई उन सभी के हक में खड़ी होती हैं जिन्हें समाज में निचले पायदानों पर रखा गया है। वर्तमान संदर्भ में निम्न वर्गीय लोग पैसों की ख़ातिर शरीर तक बेचने को तैयार हो जाते है। और ऐसे उदाहरण हमें हर देश में देखने-सुनने को मिल जाते है। निम्न वर्ग अभावों की कमी से जूझता है। उसके पास जिन्दगी को बेहतर ढंग से जीने के लिये संसाधनों व सुविधाओं की कमी होती है।

4.2.3. स्त्री मुक्ति का चित्रण

आज की नारी अभिलाषी है, जिसके लिये यह निरंतर संघर्षरत रहने का प्रयास कर रही है। आज भी जागरुक नारी ने यह सिद्ध कर दिया है कि वह पुरुष से किसी भी प्रकार तथा किसी भी क्षेत्र में कम नहीं है। आज उसके मन में परम्परागत व्यक्तित्व से मुक्ति पाने का निश्चय है। आज उसकी सोच में अंतर आया है। आज वह पुरुष की जीवन संगिनी ही नहीं, प्रति-द्वन्द्विनी

भी है। आज नारी पुरातन समाज द्वारा पहनाये झूठे आवरण को उतार कर फेंक रही है तथा अपना वास्तविक रूप पहचानने को तत्पर है। नारीवादी चिंतन का विषय अब समूचे जगत का विषय बन गया है। इस संघर्ष ने स्त्री-पुरुष के परस्पर सम्बन्धों के मूल्यों को बदलने का निश्चय किया है। अब नारी का नया व्यक्तित्व हमारे सामने उभरकर आ रहा है। जब जब नारी शोषण का शिकार होती रहेगी, तब-तब नारी चेतना के प्रश्न पूरी प्रखरता के साथ उभरकर सामने आते जायेंगे।

बच्चन सिंह ने लिखा है "स्त्रीवाद स्त्रियों के दमन के विविध रूपों का अध्ययन करता है और दमन से उन्हें मुक्त कराने की पहल करता है। यह स्त्री की वैयक्तिक राजनीतिक एवं दार्शनिक समस्याओं से जुड़ा हुआ है ।"[38] स्त्रियों को वैचारिक और व्यावहारिक स्वतंत्रता की आवश्यकता अपने शोषण और दमन के कारण ही महसूस होती गई जो स्त्रीवादी चिंतन के रूप में अस्तित्व में आई । परमानन्द जी लिखते हैं कि "स्त्रीवाद एक बहुविमर्श प्रधान पद है। स्त्री असमानता के विरुद्ध विद्रोह करती है, काया में बन्दी होने से इन्कार करती है, पुरुष प्रधान समाज के वर्चस्व से लड़ती—भिड़ती है। तब यह पद सार्थक होता है ।"[39] स्त्रीवादी चिन्तन एक विचारात्मक आन्दोलन के फलस्वरुप उभर कर आया है। पश्चिम के महिला मुक्ति आन्दोलन का प्रभाव भी स्त्रीवादियों पर अत्यन्त तीव्र रूप में पड़ा है, जिसमें मेरी ठोलस्टन क्राफ्ट, सीमोन द बोउवार, बैट्टी फ्रीडन आदि ने स्त्री के अधिकार आत्मचेतना एवं स्वावलम्बन का स्वर ऊँचा किया। उनके इस स्वर की गुंज हमें भारत में भी विशेषतः बीसवीं शती के उत्तरार्द्ध में रचे गये साहित्य में स्पष्ट रूप से सुनाई देती है। विमल सहाबुद्ध ने लिखा है कि “आधुनिक नारी 47 वर्षों के भीतर अनेक क्षेत्रों में अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने में समर्थ हो पा रही है । यह स्त्री एक ओर परम्परागत संस्कारों को ढो रही है, तो दूसरी ओर अपनी स्वतंत्र पहचान बनाने के लिये छटपटा रही है । इस बदलती स्त्री को महिला कथाकारों ने बखूबी रेखांकित किया है। उसकी छटपटाहट पूरे तीखेपन के साथ व्यक्त हुई है ।"[40]

नारीवाद चेतना विकसित करने का अर्थ है- पितृक सामाजिक वर्चस्व को तोड़ते हुये नारी को समानता के अधिकार प्रदान करना और उसे समाज में मानवीय रूप प्रदान करना है। नारी चिंतन के संदर्भ में नारीवादी दृष्टि की यही सबसे बड़ी भूमिका है। आज लेखिकायें इस परिवर्तन शील समय में नारी के परम्परागत रूप में परिवर्तन को ढूँढ रही हैं तथा उनकी अस्मिता के लिये पूरी ईमानदारी से लड़ रही हैं। एक नारी लेखिका ही नारीवादी दृष्टि रख सकती है क्योंकि पुरुष के लिये तो यह दृष्टि - मात्र ही है। विजया वारद लिखते हैं कि "हिन्दी में महिला लेखिकाएँ अपनी प्रतिभा के बलबूते पर अभिव्यक्ति के इस क्षेत्र में पूरी ईमानदारी के साथ प्रयत्नशील हैं। इनकी कहानियाँ मील का पत्थर भले ही न बन पाई हों, तो भी बदलती मूल्य व्यवस्था के यह महत्वपूर्ण दस्तावेज बनने की शक्ति रख सकती हैं।"[41] इस प्रकार कहा जा सकता है कि महिलाओं द्वारा रचित साहित्य नारीवादी चिंतन का आधार है।

स्त्रीवादी चिंतन–परम्परा को लेकर भारतीय साहित्य दर्शन एवं धर्मशास्त्रों में चिंतन की एक सुदीर्घ परम्परा रही है। जहाँ स्त्री की सम्पूर्ण सत्ता को भोग्या, अबला, ललना, कामिनी, रमणी आदि विशेषणों के साथ हेय एवं पुरुष - सापेक्ष रूप में चित्रित किया गया है। इसका प्रमुख कारण यह है कि प्राचीन एवं मध्य युगीन-साहित्य और दर्शन के रचयिता एवं टीकाकार, सभी पुरुष थे। दूसरे मातृसत्तात्मक व्यवस्था के अपदस्थ होने के बाद से समाज में पितृसत्तात्मक व्यवस्था का विधान रहा है, फलतः स्वाभाविक था कि पुरुष के संदर्भ में पुरुष - दृष्टि द्वारा स्त्री को देखा जाता। इसलिये पुरुष की श्रेष्ठता, सम्मान, स्थान, शक्ति, अधिकार और स्वार्थ की रक्षा के लिए धर्मशास्त्रों ने अनेक ऐसे आप्तवचनों, सूत्रों श्लोकों की रचना की, जिन्होंने स्त्रियों के जीवन को अनेक सामाजिक-नैतिक अर्गलाओं में बाँध दिया। 21वीं शताब्दी के समाज में नारी की एक नई छवि उभरी है और नारी उस छवि पर पर्याप्त चिन्तन मनन भी करती है जो परम्परागत नारी छवि से पर्याप्त भिन्न है जिसे परिवर्तन विकासोन्मुख छवि कहा जा सकता है। परिवर्तित

विकासोन्मुख छवि का अभिप्राय ऐसी नारी छवि से है जो स्वहित को नकारे बगैर परिवार, समाज व राष्ट्र के प्रति संवेदनशील एवं जागरुक हो। साहित्य में नारी की परिवर्तित छवि प्रस्तुत हो रही है। इसलिए पाठ्य पुस्तकों में भी नारी की परिवर्तित विकासोन्मुख छवि पर चिंतन करना आवश्यक है।

महादेवी वर्मा– 'श्रृंखला की कड़िया' में लिखती हैं "कौतूहल वश बाहर के संघर्षमय–क्षेत्र में प्रवेश करने वाली स्त्रियों की शक्ति का ऐसा परिचय मिला कि पुरुष - समाज ही नहीं स्त्री भी अपने सामर्थ्य पर विस्मित हो उठी। इतने दीर्घकाल तक निष्क्रिय रहने पर भी स्त्री ने सभी कार्य क्षेत्रों में पुरुष के समान ही सफलता पा ली है। अब यह प्रत्यक्ष हो चुका है कि वे अपनी कोमल भावनाओ को जीवित रखकर भी कठिन–से–कठिन उत्तरदायित्व का निर्वाह कर सकती है, दुर्बल से दुर्वह कर्तव्यों का पालन कर सकती है और दुर्गम से दुर्गम कर्म क्षेत्र में ठहर सकती है।"[42] उत्तर आधुनिक नारी कई तरह की चुनौतियों को स्वीकारते हुए विश्व के प्रायः प्रत्येक समाज में एक मजबूत स्तम्भ बनकर उभरी है। प्रत्येक क्षेत्र में अपनी योग्यता दर्ज कराने में वह सक्षम है। रोहिणी अग्रवाल ने लिखा है "परम्परागत पुराने मूल्य टूट रहे हैं। समय के अनुसार चिंतन के नये स्वर गूंज रहे हैं, संघर्ष में वह कहीं परास्त हो रही हैं, कहीं कामयाबी के शिखर पर हैं अर्थात् कुल मिलाकर अभी अव्यवस्था है, संघर्ष है निर्मित कुछ भी नहीं, निर्माण की प्रक्रिया निरंतर है।"[43] पाश्चात्य विचारों की समर्थक 'टेडिवियर' कहानी की नायिका गीता को नायक अखिलेश सही निर्णय स्थिति और मानसिक दशा के अनुरूप करने के लिए कहता है। वह अखिलेश से बात-बात पर झगड़ा करती है। अखिलेश उसे भारतीय विश्वास के बल पर उतना ही घेरता जाता है –"देखो गीता? अब तुम तटस्थ होकर देख, सोच और समझ सकती हो। दयावश या अधिकार जताकर तुम्हें साथ जाने के लिए विवश नहीं करूंगा। वापस जाने या न जाने का निर्णय तुम्हारा होगा। जब हमारी सगाई हुयी थी, तब हम दोनों बहुत छोटे थे लेकिन

अब समय बहुत आगे निकल आया है। इतने वर्षों में यह रिश्ता नन्हें पौधे से हरा-भरा वृक्ष बन सकता था। निश्चित रूप से मेरे भीतर तुम्हारा भाव निरंतर बना रहा है।"[44] इस प्रकार अखिलेश गीता पर अपना निर्णय न थोपकर उसे स्वतंत्र रूप से अपना निर्णय लेने का अधिकार देता है और गीता सही फैसला अखिलेश के पक्ष में लेकर अपने उत्तर आधुनिक नारी होने का प्रमाण देती है।

पश्चिम में स्त्री से सम्बन्धित समस्याओं पर विचार करने के लिये अलग-अलग आंदोलन चलते रहें, क्योंकि अलग-अलग देशों की स्त्री समस्याएं अलग-अलग रही हैं इसलिए इनको एक निश्चित मॉडल के ऊपर लागू नहीं किया जा सकता है। इसका परिणाम राष्ट्रीय स्तर के स्त्री सम्मेलनों के रूप में सामने आया है, जो इस प्रकार है:-

1. पहला अन्तर्राष्ट्रीय नारी सम्मेलन 1975 ई० में मैक्सीको शहर में हुआ था। इसमें साक्षरता और शिक्षा, लिंग भेदभाव का खात्मा, रोजगार की निश्चिता, सामाजिक और राजनीतिक अधिकारों की बराबरी पारिवारिक काम को मान्यता और कल्याणकारी योजनाओं में बढ़ोत्तरी जैसे मसले विचारे गये हैं। अगले पाँच वर्षों के लिये यह योजना तैयार की गई है।
2. दूसरा अन्तर्राष्ट्रीय नारी सम्मेलन 1980 ई0 में कोपनहेगन में हुआ था। पिछली कार्य प्रणाली से आगे इस सम्मेलन में स्त्रियों के लिये विशेष और ब्यूरो इत्यादि कायम करने की बात की गई थी। स्त्रियों से सम्बन्धित मुद्दे उठाने और प्रेस मीडिया की भूमिका का अध्ययन करने के लिये सरकारी और गैर-सरकारी संगठन सम्पर्क बनाने के लिये योजना तैयार की गई।

3. तीसरा अन्तर्राष्ट्रीय नारी सम्मेलन नैरोबी में 1985 ई0 में हुआ था। पिछली कांफ्रेंस में निश्चित किये गये उद्देश्य या लक्ष्य लागू करवाने एवं भविष्य की योजनाएँ तैयार करने का कार्य इस सम्मेलन में किया गया।
4. चौथा अन्तर्राष्ट्रीय नारी सम्मेलन बीजिंग में 5 सितम्बर 1995 में हुआ था। इसको नारी मुद्दों से सम्बन्धित बड़ा सम्मेलन माना गया है। इस सम्मेलन में मुख्य रूप से बारह विषयों पर गंभीर चर्चा हुई थी। यह विषय थे गरीबी, स्वास्थ, हिंसा, तनाव, आर्थिक–न–बराबरी, मानवी अधिकार, वातावरण मास मीडिया और कन्याओं की समस्याओं को विचारा गया । चर्चा के उपरान्त इन पक्षों की उचित व्याख्या देने का प्रयत्न किया गया। इस प्रकार पूरे का पूरा पश्चिम (यूरोप) नारी से सम्बन्धित मुद्दों के बारे में सजग होकर नारीवादी आन्दोलनों के रूप में आया है। इन आन्दोलनों के उपरान्त जो विचार चिंतन का हिस्सा बने है उनकी खोज की जा सकती है।

नारी की सोच में प्रगतिशील परिवर्तन हो गया है। अब नारी सिर्फ अबला ही नहीं रह गई। उसकी स्थिति में काफी परिवर्तन देखने में आया है जिसने उसकी सोच का दायरा बढ़ाया है। नारी सिर्फ घर तक सीमित नहीं रह गई उसने अपनी मंजिल को हासिल करने के लिए घर की सीमा को भी लांघा है क्योंकि जब घर-परिवार उसे नहीं समझता तो उसे अपने विकास के लिये एक कदम बढ़ाना ही पड़ेगा । आज नारी बगैर किसी ओढ़े गये बंधन से पहले मानवी नारी और व्यक्ति नारी है। जिसकी अपनी पहचान है, अपना अस्तित्व है और इसी अस्तित्व की खोज में नारी प्रयासरत् है। आज - नारी अपनी पहचान की तलाश में घर से निकलती हैं और घर की देहरी को लाँघकर समाज में अपनी अलग पहचान बनाने को तत्पर है। 'पहचान' कहानी-संग्रह की 'पहचान' कहानी में नायिका परिवारजनों के विरोध में खड़ी होकर अपनी पहचान बनाने के लिए हौंसला करके कदम आगे बढ़ाती हैं। अपने पति के द्वारा इंकार करने की सूरत में वो सोचती

है- "वहाँ खड़े-खड़े लगने लगा था जो कदम आगे बढ़ाया था वह अंगद के पैर - सा वहीं टिका है...... वह अपने से अपने को नहीं नकारेगी . । बस अब एक आखिरी झटका । सिर उठाती है मीलों ऊपर का प्रकाश पुंज नीचे को सरक आया था।"[45] इस प्रकार नायिका अपनी पहचान बनाने के लिये किसी के भी आगे झुकने के लिए तैयार नहीं है । नायिका इसके प्रति पूरी तरह से सचेत है कि पहचान की तलाश में निकला हुआ कदम वापिस उसे ससुराल में प्रवेश नहीं दिला पाएगा किन्तु फिर भी वह अस्तित्व को सर्वोपरि मानकर चलती है।

इसी तरह 'क्रमशः' कहानी - संग्रह की 'एक झरना मेरे लिये' कहानी में नायिका का ऐसा रूप चित्रित हुआ जिसमें निर्णय लेने की क्षमता है। उसके पास अपनी बातों के लिए तर्क है। अपनी जिंदगी के हर फैसले पर खुद उसकी ही मोहर लगती है । नायक के शब्दों में—"यूँ भी वह उसके सामने छोटा पड़ जाता था। उसके यहाँ औरतों से छोटा होने, डरने या झिझकने की जरुरत नहीं होती थी। औरत हर तरह हर समय उपलब्ध रहती थी चाहे वह माँ हो, बहन हो या पत्नी । पर वह साँवली-सी लड़की जितना अपनी ओर खींचती थी उतनी ही अनुपलब्ध होती जाती थी। उसे वह वहीं रोक देती थी जहाँ वह चाहती थी बिना कहे ।"[46] नारी का ऐसा विचित्र रूप जो उसे औरों से अलग करता हैं और अपनी इच्छा से हर फैसला लेती । 'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में बंजारिन ठाकुर द्वारा ज़बरदस्ती उठा लिए जाने पर भी घबराती नहीं है बल्कि परिस्थिति का डटकर सामना करती है - "अपनी-अपनी जगह है और थे ऊँचे लोग है इसलिये कोई अश्यों काम न करना ठाकुर कि थाने हाथ मलनों पड़ै। तौश में मत आओ अपने आने वाले कल का ख्याल करो । इज्जत रूँ मन्ने अपनी मोटर मैं बैठा थे मन्ने म्हारी बस्ती में छोड़ आ जाओ ।"[47] मुश्किल समय में भी समझदारी व आत्मबल का परिचय दिखाकर सोनारी ने ठाकुर को बुद्धि बख़्शी और ठाकुर उसे सम्मान सहित उसके घर छोड़कर आया ।

लेखिका ने 'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में पुष्पा सरपंच लैंगिक भेदभाव के विरुद्ध आवाज बुलन्द करती है। वह अब पति की रबड़ स्टाम्प न थी बल्कि स्वयं निर्णायक फैसले ले रही थी। वो सिर्फ कागजी सरपंच न रह गई बल्कि पंचायत की बैठकों में उसके साथ जो भेदभाव हो रहा था उसके विरुद्ध आवाज उठाई- "पंचायत की बैठक में सचिव कुर्सी पर बैठता और महिला सरपंच को नीचे बैठाता पुष्पा देवी ने इसका विरोध किया कहा- सरपंच वह है। नीचे तो वह नहीं बैठेगी। जब सचिव कुर्सी पर बैठा हो, आखिर में फैसला हुआ कि सचिव भी नीचे दरी पर ही बैठेगा। यह उसकी बहुत बड़ी जीत थी।"[48] इस प्रकार लेखिका लैंगिक भेदभाव को मिटाने का प्रयत्न कुछ पात्रों की सहायता से करती है। इसके अतिरिक्त लेखिका ने पुरुष पात्रों के माध्यम से लैंगिक भेदभाव को समझने वाले पात्रों की सहायता से नारी के उत्थान में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। 'पहचान' कहानी-संग्रह की 'पहचान' कहानी में धीरज ही अपनी भाभी को अपनी पहचान बनाने के लिये प्रोत्साहित करता है और धीरज अपनी पत्नी डॉरथी की घर के काम में पूरी मदद करवाता है। "डॉरथी के आने में वक्त लगेगा तब तक एक कप कॉफी हो जाये .... कॉफी मेरे हाथ की और कॉफी के बाद खाना भी। .. जो पहले घर पहुँचता है वह खाना बनाना शुरू कर देता है। कोई वाटर-टाइट कंपार्टमेंट नहीं है यहाँ।"[49] धीरज का ऐसा व्यवहार समाज में लिंग आधारित जो स्तरीकरण देखने को मिलता है उसको खत्म करने का प्रयास करता है जो पुरुष समाज नारी- पुरुष के काम को बाँट कर देखता है उसमें नारी घर का काम करेगी न कि पुरुष लेकिन यहाँ पुरुष बिना किसी भेदभाव के घर का काम करता है जो कि हमारी सोच में जो थोड़ा परिवर्तन देखने को मिल रहा है उसका प्रतीक रूप है।

नारी का कलाप्रिय व्यक्तित्व स्वरुप एवं अपनी छवि में परिवर्तन लाना चाहती है। अबला नारी ने सबला रूप लेकर अपनी बेबसी को तोड़ दिया है। आभा गुप्ता लिखती हैं— "नारी जागृति की लहर ने नारी के भीतर नारी - स्वातंत्र्य व्यक्तित्व की सत्ता की चेतना फूँक दी

और उसने जाना कि वह इस संबन्धों से पूर्ण एक नारी है, जिसका अपना नाम, भावनाएँ एवं विचार हैं। वह सम्बन्धों में बंधने से पूर्व व पश्चात् अपनी स्वतंत्र सत्ता को लेकर भावनओं को साकार होते देखना चाहती है। वह अपनी व्यक्ति अस्मिता कायम करने में लगी हैं।"[50] 'पहचान' कहानी की नायिका मीना की मज़बूरी कुछ भिन्न प्रकार की है व्यावसायिक प्रकृति के जिस संयुक्त परिवार में वह बहु बनकर आती है वहाँ उसकी उच्च शिक्षा और संगीत प्रियता का बहुत ही भद्दे ढंग से विरोध होता है। विडम्बना यह है कि पति सुरेश के लिए भी वह मात्र देह बनकर ही रह जाती है किन्तु एक समय ऐसा भी आता है जब वह संगीत-कला की साधना के लिये प्रतिबद्ध हो जाती है और अपने उस क्षुद्र पारिवारिक वातावरण से ही कटकर अलग हो जाती है - "वह हिम्मत नहीं हारेगी, आज सुरेश से अपनी बात साफ-साफ कह देगी। वह उसकी पत्नी है। घर की बहू .... बच्चों की चाची माँ ..एक गृहस्थन .. एक औरत, लेकिन वह कुछ और भी है जो, वे सब नहीं है।"[51] इस प्रकार मीना अंत में परिवार के सभी सदस्यों की सुविधाओं का ध्यान रखते हुए संगीत का रियाज करती और अपनी व्यक्ति अस्मिता को प्राप्त करने की कोशिश करती हुयी उस कोशिश में सफल भी होती है।

उपर्युक्त विवेचन से तात्पर्य एक नारी की अपनी विशिष्टता अथवा पहचान किन मूलभूत तत्वों से निर्मित होती है यह मुख्य तथ्य सामने आता है। नारी को पुरुष के समान ही सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक आदि अधिकार प्राप्त हों। नारी के इन अधिकारों का हनन नारी अस्मिता का हनन है: और इन अधिकारों की प्राप्ति नारी-अस्मिता की प्रतिष्ठा का घोतक माना जा सकता है। एक ओर आज की व्यक्तित्व सम्पन्न स्त्री की अस्मिता और जाति अस्मिता में बढ़ता जाता फासला है। स्त्री की शिक्षा, आर्थिक परिवेश, वैज्ञानिक और तकनीकी में उन्नति में स्त्री की व्यक्ति अस्मिता एक समृद्ध इकाई के रूप में विकसित हुयी है, परन्तु उसकी जाति अस्मिता ही समाज में स्वीकृत और मान्य है। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से ही स्त्री वादी- चिंतन का सूत्रपात

पश्चिम में सिमोन द बोउवार और वर्जीनिया वुल्क तथा हमारे देश में इस्मत चुगताई और अमृता प्रीतम से हुआ | आठवें दशक तक यह हिन्दी में आन्दोलन के रूप में उभरा। स्त्रियों ने अपने हिस्से के दर्द और जटिलताओं के बारे में स्वतः लिखा। उसने अपने को भोक्ता से कर्ता के रूप में प्रस्थापित किया । इस हेतु उसने अपनी लड़ाई स्वतः लड़ी। विरोध और आक्रोश को झेलते हुए उसने अपने आसपास जो लक्ष्मण- रेखा खींच ली हैं उससे उन्हें स्वतः उबरना है, उसे अपनी सामाजिक पहचान सही और सकारात्मक तरीके से प्राप्त करना है। स्त्री लेखन में आज जो मूल परिवर्तन आया है। वह महिला साहित्यकारों के लिये अब स्त्री का रुपक न लिंग है न आधी दुनिया, वह एक सतत् परिवर्तन शील समाज है।

4.2.4. वृद्धावस्था की समस्या :

माता – पिता के प्रति बच्चे कर्तव्य से मुँह मोड़ ले रहे हैं। सम्बन्धों में बढ़ता स्वार्थ व आर्द्रता का अभाव इंसान को खून के रिश्तों से दूर करता जा रहा है। महेन्द्र कुमार वर्मा जी लिखते हैं, "परिवार वृद्ध अपाहिज, रोगी एवं विधवाओं की सुरक्षा का साधना है। जीवन के ऐसे अवसरों पर जब व्यक्ति स्वयं अपनी रक्षा नहीं कर सकता तथा उसे दूसरे के आश्रय की आवश्यकता होती है तब परिवार उसकी सुरक्षा करता है।”[52] माता-पिता परिवार की धुरी हैं। बचपन से बच्चे की सुरक्षा करने वाले माता-पिता बूढ़े होकर बच्चों पर बोझ बनने लगते हैं। जिस कारण बच्चे उनसे पीछा छुड़ाना चाहते हैं। लेखिका कमल कुमार ने 'पहचान', 'वैलेन्टाइन–डे' 'घर- बेघर' कहानी-संग्रहों में आज की पीढ़ी कैसे अपने कर्तव्य से विमुख हो रही है उसका वर्णन किया है। ‘पहचान' कहानी - संग्रह की 'बेटे' व 'कोल्हू के बैल' कहानियों में इसी स्थिति का चित्रण किया गया है ।

'बेटे' कहानी में पाँच बेटों के रहते हुये भी पिता दयनीय स्थिति में जीवन यापन कर रहा है। इसमें बेटे अपने बूढ़े पिता की ज़िम्मेदारी उठाने से कतराते हैं। सभी एक-दूसरे पर उसकी ज़िम्मेदारी देना चाहते हैं। दीपक कहता है- "बंबई बड़ी खराब जगह है पिताजी नौकर ही नहीं मिलता। आशा भी काम पर चली जाती है पीछे से आपको कौन देखेगा। यहाँ कम से कम आपको वक्त पर खाना तो मिलता है।"[53] इस प्रकार सभी बच्चे बोझ समझकर पिता के प्रति कर्तव्यों से विमुख हो जाते हैं। 'पहचान' कहानी-संग्रह की ही 'कोल्हू के बैल' कहानी में बच्चे अपने माता-पिता को भूलकर अपनी जिन्दगी में ही व्यस्त हो जाते हैं उनकी जरुरतों को छोड़कर अपनी ही व्यस्तताओं में जीते हुये उनके प्रति कर्त्तव्यच्युत हो जाते हैं। अजय के शब्दों में " दामाद हो या बेटे . सारे एक से हैं। जिन्दगी भर इन्हें देते रहें .अब सब अपने में मस्त हैं। कभी पूछा है किसी से कि हमें भी कुछ चाहिए हमारी भी कुछ ज़रुरत है।"[54] 'वैलेन्टाइनडे' कहानी -संग्रह की 'अम्मा' और 'सूखा' कहानी में बच्चे माता-पिता के प्रति अपने कर्त्तव्यों को भूल जाते हैं | 'सूखा' कहानी में जुगल किशोर अपने पिता के कारण ही शहर जाकर ऊँचाईयों को छू पाता है, किन्तु दो वर्ष के अन्तराल में ही अपने पिता के प्रति कर्त्तव्यों को विस्मृत कर बैठता है। नन्द किशोर के यह कहने पर कि चाचा की चिट्ठी का जवाब दिया करो और गाँव में इस वर्ष सूखे की स्थिति बन रही है। तो जुगल किशोर कहता है-"अब भाई साहब आप ही बातइये मैं क्या करूँ ? गाँव में सूखा पड़ता है या बाढ़ आती है तो उसमें मैं क्या कर सकता हूँ.... वहाँ गाँव में बैठ इस बूढ़े को कैसे समझाएँ कि मेरी अपनी कितनी प्रॉब्लम्स हैं।"[55]

'अम्मा' कहानी में अम्मा की ऐनक बनवाने के लिये घर में बेटे-बहू व पोता-पोती किसी भी सदस्य के पास समय नहीं है। जब दुकानदार उसे कहता है कि घर पर किसी को भी कह देती वो लोग आ जाते। तब अम्मा कहती हैं-" किसी को फुरसत नहीं बेटा घर में इन फालतू कामों के लिए | चश्मा ठीक कराने का या चप्पल ठीक कराने का काम उनके लिये इतना जरूरी तो

नहीं। करवा देंगे, रख दो। इतनी जल्दी क्या है? तुम्हें कौन-सा जाना है। कहकर टाल देते हैं।"[56] लेखिका कमल कुमार के 'घर–बेघर' कहानी - संग्रह की 'नालायक' और 'घर-बेघर' कहानियों में बच्चों द्वारा अपने कर्त्तव्यों को तो विस्मृत कर दिया जाता है परन्तु अपने अधिकारों के लिये हमेशा प्रयत्नरत् रहते हैं। 'नालायक' कहानी में चौधरी अपने तीन बेटों की पढ़ाई के लिए ज़मीन तक बेच देते हैं और आगे उनके बच्चों के लिए भी ज़मीन बेच देते हैं। वहीं बेटे चौधरी की बीमारी में उसे देखने का समय भी नहीं निकाल पाते। चौधरी के शब्दों में—"शांति इन तीनों को पढ़ाया-लिखाया, इनकी पढ़ाई पर शादी-ब्याह पर खर्च किया। जब–जब इन्हें ज़रुरत पड़ी पैसे दिए लेकिन हमारी बीमारी तक में ये आकर खड़े नहीं हुए।"[57] जब चौधरी की तबीयत खराब रहने लगी वह चाहते थे कि उनके बेटे आकर दुकान संभाले। हरि और शंकर ने तब दो-टूक कह दिया। "कैसी बात करते हो बाबू जी? मल्टीनेशनल की नौकरी छोड़कर आपकी इस दुकानदारी में आए। अपना भविष्य चौपट कर लें। हमारे बस का नहीं।"[58] 'घर - बेघर' कहानी में भी माँ-बाप तो बच्चों के प्रति अपनी ज़िम्मेदारियों को निभाते हैं किन्तु बच्चे उनके प्रति अपने फर्ज़ भूल जाते हैं। परितोष और केशव अपने माता-पिता का दाह-संस्कार तक न कर सके। पिता की इच्छा थी कि उनका संस्कार उनका बेटा परितोष करेगा लेकिन जब उसकी बहन नेहा पिता की मृत्यु हो जाने पर संस्कार के लिये बुलाती है तो वह कहता है—"आज इतवार है कल बुकिंग होगी तो बाऊँगा। यू गो अहेड। मेरा इंतजार मत करना।"[59] इस तरह बेटे अपने माता-पिता के प्रति अपने कर्त्तव्य उत्तरदायित्व को भूलकर अपने जीवन की व्यस्तताओं में लग जाते हैं।

4.3. आर्थिक समस्या

वर्तमान में आर्थिक समस्या को लेकर समाज में जद्दोजहद बनी हुयी है। इस समस्या का कैसे सामना करें? इन सबको देखते हुए लेखिका कमल कुमार ने अपने कथा-साहित्य में आर्थिक समस्या का बखूबी चित्रण किया है। आर्थिक समस्या से जुझने वाले मध्यम और निम्न

वर्ग आते हैं। मध्यम वर्ग अपनी सामाजिक स्थिति को बनाये रखने में आर्थिक समस्या का सामना करता है और निम्न वर्ग अपनी स्थिति को सुधारने में ही लगे रहते हैं। समाज में विद्यमान सामाजिक व आर्थिक विषमता बिजनेस टाइकून की खुशहाली और आम आदमी का दमन चाहती है। इस कारण अमीर वर्ग का दूसरे दोनों वर्गों के साथ भेदभाव बना रहता है । मध्यम वर्ग, उच्च वर्ग एवं निम्न वर्ग के मध्य आने वाला वर्ग है। मध्यवर्ग में नौकरी पेशा वर्ग, बुद्धि प्रधान वर्ग, शिक्षक, क्लर्क छोटे उत्पादक, दुकानदार आदि आते हैं। मध्य वर्गीय लोगों में ऐसी कई आकांक्षाएँ पलती हैं जिन्हें ये हासिल करना चाहते हैं। इनके कथा साहित्य में मध्यम वर्ग के परिवारों का चित्रण उच्च और निम्न वर्ग के मुकाबले थोड़ा कम हुआ है। मध्यम वर्गीय लोग अपने भीतर कई आकांक्षाएँ पालते हैं ।

अर्थ को लेकर पूँजीवादी दृष्टिकोण सामंतवादी व्यवस्था में स्त्री जहाँ भोग की वस्तु थी वहीं पूँजीवादी व्यवस्था में वह 'एक वस्तु' मानी गई । ऐसी वस्तु जिसकी खरीद-फरोख्त की जा सके। पूँजीवादी व्यवस्था ने उपभोक्तावादी - संस्कृति को जन्म दिया, जिससे नारी की अस्मिता, उसकी स्वतंत्र सत्ता का अपहरण हो गया और उसे 'फैशन की वस्तु', 'देह की वस्तु' माना गया । उपभोक्ता - संस्कृति के मायाजाल ने स्त्री को क्रय - विक्रय की वस्तु मानकर उसके स्वत्व, उसकी निजता को दांव पर लगा दिया और अपने तन कर सौदा करने के लिये अभिशप्त किया। 'उपभोक्तावाद और स्त्री अस्मिता का प्रश्न' शीर्षक लेख में डॉ० वीरेन्द्र सिंह ने उचित लिखा है कि "सामंतीय पूँजीवाद में फैशन कुछ लोगों का कर्म था पर भोगवादी पूँजीवाद में वह ‘वर्ग विशेष’ का श्रृंगार प्रसाधन बना जो इलेक्ट्रोनिक मीडिया आदि के द्वारा छनकर पूरे समाज को देह की गिरफ्त में लाता जा रहा है । औरत का शरीर फैशन का वाहक है। औरत फैशन में आकर अपने आप से अजनबी बन जाती है। प्रगतिशील विचार धारा के लेखक यशपाल के शब्दों में "इस पूँजीवादी सभ्यता में नारी भोग विलास की सामग्री है जिस पर पुरुष का पूर्ण अधिकार है।

उसका अस्तित्व मात्र इतना है कि वह किसी की पुत्री, पत्नी या माँ बने।"[60] इस प्रकार पूँजीवादी समाज में नारी की पहचान सिर्फ तीन रिश्तों तक सीमित थी। आर्थिक समस्याओं का अर्थव्यवस्था पर व्यापक प्रभाव रहा है। जिसमें बाजारवाद, पूँजीवाद, निजीकरण और वैश्वीकरण अर्थात् विश्व की अर्थव्यवस्था के परस्पर बनते सम्बन्धों ने बाजारवाद की प्रक्रिया को प्रभावित किया है।

आज बाजारवाद न केवल हमारी आर्थिक संस्कृति में परिवर्तन कर रहा है अपितु सामाजिक तथा सांस्कृतिक स्तर पर भी अनेक प्रकार के परिवर्तन बाजारवाद की उपज है। इस संदर्भ में अमित कुमार सिंह का निम्न वक्तव्य द्रष्टव्य है "वैश्वीकरण ने प्राचीन एवं परम्परागत भारतीय समाज की बुनियादी आस्था को झकझोर कर रख दिया है। भारत में व्यक्ति, परिवार, समाज और संस्कृति के समक्ष पुनर परिभाषा का संकट उत्पन्न हो गया है। भूमंडलीकरण ने भारत मे समाज व संस्कृति के प्रत्येक पहलू को प्रभावित किया है। इन परिवर्तनों में कभी भविष्य के खतरे की आहट सुनाई देती है तो कभी इसमें एक नए भविष्य गढ़ने का सुखद अहसास परिलक्षित होता है।"[61] वस्तुतः बाजारवाद, पूँजीवाद का नया अवतार है जो भूमण्डली करण के लोक लुभावन चेहरे के रूप में हमारे समक्ष उपस्थिति हुआ है। बाज़ार का एकमात्र उद्देश्य अधिक से अधिक उत्पादन करना तथा लाभ कमाना है। अपने इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए बाज़ार अनेक प्रकार के छद्म रचता है। बाजार मूल्यों से नहीं मुद्रा से चलता है और मानवीय संवेदनाओं तथा भावनाओं से उसका कोई सम्बन्ध सरोकार नहीं है। बाजार के लिए व्यक्ति, व्यक्ति न होकर उपभोक्ता है। यह व्यक्ति बाजार के लिए उसके उत्पादन तथा सेवाओं का खरीददार है और बाज़ार का इससे केवल लाभ कमाने तक का संबन्ध है। मृणाल पाण्डेय के अनुसार " बाजार बहुत साफ सुथरे गणित के समीकरणों से संचालित होता है और उसमें मुनाफा कमाना, अपने को बचाये रखना, प्रतिस्पर्धी को परास्त करना और अधिक मुनाफा कमाना, इसकी सबसे पहली

शर्त है।‘[62] आज बाज़ार जिस रूप में हमारे सामने आया है उसने हमारी सभ्यता, संस्कृति, धर्म, साहित्य और अध्यात्म को प्रभावित - परिवर्तित किया है। जीवन और जगत के लगभग सभी क्षेत्रों में बाज़ार का उचित-अनुचित दखल मनुष्य के अस्तित्व पर गहरे प्रश्न चिन्ह लगा रहा है। आज बाज़ार हमारी प्राथमिकताएँ तय कर रहा है।

4.3.1. धन – लालसा का चित्रण

मध्य वर्ग के लिए बदतर हालातों में भी दिखावे की प्रवृत्ति का त्याग करने के बारे में न सोचना उनकी आर्थिक स्थिति को और भी नीचे गिराता जाता है। मध्य वर्ग का व्यक्ति जीवन में कई तरह की आकांक्षाओं की पूर्ति करना चाहता है जिसका चित्रण लेखिका ने 'पहचान' कहानी - संग्रह की 'आखेट', परिणति' कहानियों और ‘अपार्थ’ उपन्यास के माध्यम से किया है। 'आखेट' कहानी में नायक को जब एरियर के पैसे मिलते हैं तो उसके द्वारा कई तरह के सपने संजों लिये जाते हैं। कभी वो इनसे टी0वी0, फ्रिज, स्कूटर, गैस चूल्हा, कूलर लेना चाहता है तो कभी हिल स्टेशनों की यात्रा करना चाहता है- "उसने पहले ही फैसला कर लिया था अबकी वह अपने लिए स्कूटर खरीदेगा। कई पुराने स्कूटर देख भी चुका था। जब से उसे पता चला था ऐरियर मिलने वाले है। कूलर न ले ले। इस तरह कभी स्कूटर, कभी कूलर, कभी गैस का चुल्हा, तो कभी टी०वी० रोज ही उसकी पसन्द और ज़रुरत बदल जाती और वो तय ही नहीं कर पाता कि एरियर के पैसों का क्या किया जाए। 'परिणति' कहानी में अनिल अपनी आने वाली जिन्दगी को लेकर सपने देखता है। पढ़-लिखकर कुछ बनने के बाद गीता से शादी कर जिन्दगी में आगे बढ़ना चाहता है-"प्रो0 अनिल सक्सेना का ड्राइंगरूम मॉडर्न आर्टस की पेंटिग, किताबों से भरे रैक्स, लैक्चरर पत्नी की मॉर्निंग क्लासिज में मेरी बेबी सीटिंग और मेरी आफ्टर नून क्लासिज में उनकी घर की देखभाल-साहित्यिक गोष्ठियों, सेमिनार, लिटरेरी गैट टूगेदर, मेरी किताब का उद्घाटन समारोह।"[63] अनिल गीता के साथ अपने सुनहरे भविष्य को लेकर ये सब सोचता है

किन्तु अब हालात बदल गये थे। अब अनिल चेचक रोगी का पता कर बताने के एवज में पैसे कमा रहा था और इससे मिलती सफलता को लेकर आगे भविष्य के सपने संजोता है-"वैसे ही मैं भी चाहता था कि यह बीमारी फैले, खूब फैले–कड़वी बेल की तरह। फिर मैं एक कमरा लूँगा अलग से उसमें अपना दफ्तर खोलूँगा। कुछ वर्कर काम करेंगे-कमीशन पर। एक केस में अगर दो सौ, तीन सौ, भी देने पड़े–तो भी क्या ? दफ्तर में बैठकर कोरेसपोंडेंस से एम०ए० पूरी करूँगा। एम0फिल0 करके कॉलेज में जॉब लूँगा ....यह धंधा साइड धंधे के रूप में चुपचाप चलता भी रह सकता है - बंद भी किया जा सकता है।"[64] अनिल द्वारा अपनी आकांक्षा की पूर्ति के लिए गरीब व बीमार वर्ग की बीमारी की दुआ की जाती है। अपने अपने वाली जिन्दगी और नौकरी को लेकर उसकी इच्छाएँ बढ़ती ही जाती हैं। 'अपार्थ' उपन्यास का नायक अशोक भी सारी जिन्दगी घर में बिजली से दमकने वाला फानूस टांगने की सोचता रहा। उसकी ये इच्छा कभी पूरी ही न हो सकीं। "छत के बीच का कुंडा आज भी खाली था। सोचा था उसने .एक दिन वह कुँडे में लाकर बड़ा—सा कई –कई बत्तियों वाला एक फानूस टांगेगा .. फिर एक ही पोर के दबाव से एक साथ सारी बत्तियाँ दिप - दिप कर जल उठेंगी .... दीवारों पर अंधी रोशनी के उभरी छायाएँ .. विलीन हो जायेंगी ..एक जगमग दीपेगी चारों तरफ...... लेकिन कुंडा खाली था।"[65] इस तरह मध्य वर्ग के लोग सारी ज़िन्दगी अपनी आकांक्षाओं की पूर्ति में ही लगे रहते हैं किन्तु फिर भी कई बार उनका पूरा होना लिखा ही नहीं होता है।

वहीं 'मै घूमर नाचूँ' में राजस्थान में सूखे से हालात ऐसे बन गए हैं कि कृष्णा और उसके पिता को घर - बार बेचकर पलायन करना पड़ा। सूखे के कारण निम्न वर्गीय लोगों का जीवन अस्त-व्यस्त हुआ। सूखे से लोगों की जान जा रही थी पर सूखे से बड़े अमीर घरानों में कोई फर्क न पड़ता था। लेखिका, ठाकुरों के परिवार का जींवत चित्रण करती हुई कहती हैं- "ठाकुर की मौत का सूखे से कोई मतलब नहीं था। मौत के जश्न का जैसे ठाकुर के बेटे शेरू की मौत से

कोई मतलब नहीं था। पर गाँव में तो सूखे से मौतों का कोई मतलब नहीं था । पर गाँव में तो सूखे से मौतें हो रही थीं।‘‘[66] गरीब निम्न वर्ग यहाँ पर पैसे की कमी के चलते मौत के मुँह में पहुँचता है वहीं अमीर वर्ग पर आस-पास के हालातों से कोई फर्क नहीं पड़ता।

4.3.2. बेरोजगारी की समस्या

वर्तमान समय में बेरोजगारी की समस्या बहुत ही व्यापक स्तर पर बढ़ रह है जिससे युवा पीढ़ी का समय रोजगार की तलाश में निरंतर बढ़ रहा है। आज बेरोजगारी से जुझती युवा वर्ग इस समस्या से पीड़ित है । रोजगार न मिलने से परिवार की स्थिति दयनीय हो रही है। युवा को रोजगार न मिलने से परिवार में कलह की स्थिति बनी रहती है। दिन पर दिन महंगाई का विकराल रूप समाज पर आतंक जमाता चला आ रहा है। इस मंहगाई एवं बेरोजगारी की स्थिति में मध्यवर्गीय जीवन अशान्ति अस्थिरता एवं असंतोष का अनुभव कर रहा है। कभी-कभी युवा वर्ग दिशाहीन भी हो जाता है। जिसका दुष्परिणाम सम्पूर्ण समाज को भुगतना पड़ता है। आज का युवा वर्ग नौकरी न मिलने के कारण कई बार तो कोई अन्य कार्य करने के लिये तैयार भी हो जाता है लेकिन उसके माँ-बाप चाहते हैं कि वह कोई और कार्य न करके सरकारी नौकरी ही करें।

अगर देखा जाए तो प्रत्येक व्यक्ति की कोई न कोई मजबूरी है तभी तो वह विदेशों की ओर पलायन कर रहा है। 'हैमबरबर' उपन्यास का सुरीन्द्र आई0आई0टी0 में इंजीनियर है। भारत में बेरोजगार होने के कारण वह पैसा कमाने के लिए अमेरिका चला जाता है, उसी के शब्दों में "चार छः साल बाद लौट आऊँगा। थोड़ा पैसा कमालूँ।"[67] ‘हैमबरगर’ उपन्यास का सुरीन्द्र यहाँ पैसा कमाने के बाद भारत लौटना चाहता है ठीक वैसे ही 'परिन्द्रे' कहानी का रमेश भी पैसा कमाने के बाद ही भारत आना चाहता है। रमेश मिश्रा एक डॉक्टर है। उसके पास शिकायतों का

दफ्तर है लेकिन फिर भी वह पाँच साल से ज्यादा ईरान में रहा है। वह हिन्दुस्तान इसलिए नहीं लौट रहा क्योंकि वहाँ पर गरीबी है। बेरोजगारी की समस्या एक ज्वलंत समस्या है। जिससे युवा वर्ग जूझ रहा है। बेरोजगार होने के कारण अधिकतर युवा वर्ग विदेशों की ओर पलायन कर रहा है लेकिन जो विदेशों की ओर भी पलायन नहीं कर पाता वह आत्महत्या करने के लिए मजबूर है, क्योंकि इसके अलावा उसके पास कोई उपाय ही नहीं बचता। बेरोजगारी केवल पुरुषों पर ही नहीं होती है यह स्त्रियों पर भी प्रभाव डालता है जिससे बेरोजगारी के कारण वेश्यावृत्ति भी अपना लिया जाता है। लेखिका एक मानवतावादी दृष्टिकोण को लेकर चलने वाली हैं। इनकी लेखनी का केन्द्र बिन्दु यहाँ प्रमुख रूप से स्त्री है परन्तु अब स्त्री भी बेरोजगारी का शिकार होती जा रही है। कमल कुमार ने बढ़ती जनसंख्या को एक समस्या के रूप में चित्रित किया है जिससे अनेकानेक समस्याएँ उत्पन्न हो रही हैं। जैसे पर्यावरण का असन्तुलन, अकाल की स्थिति, भूख से मरती गरीब जनता आदि।

इन्होंने अपने कथा साहित्य में मीडिया के कुप्रभाव से पथभ्रष्ट होती युवा पीढ़ी का चित्रण बड़े ही मार्मिक ढंग से किया है। मीडिया का प्रभाव आधुनिक समाज पर स्पष्ट रूप से देखा जाता है। चाहे फैशन का प्रचलन हो या आधुनिक गीत संगीत का प्रचार-प्रसार इसमें मीडिया की भूमिका अहम् होती है। मीडिया का उद्देश्य सूचनाओं का प्रसार करना, मनोरंजन करना, शिक्षित करना, घोटालों का पर्दा फाश करना समाज की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करना है लेकिन आज जो फिल्मों में प्रदर्शित और पोस्टरों में उजागर हिंसा और अश्लीलता है उसका प्रभाव वर्तमान युवा पीढ़ी पर पड़ रहा है। एक तो बेरोजगारी ऊपर से अश्लील चित्रों को दिखाकर युवा वर्ग में काम वासना को प्रभावित करना। लेखिका के 'औरत और पोस्टर' कहानी इसी सत्य को उजागर करती है। कहानी की नायिका जैसे ही अपने दफ्तर से बाहर निकलती है तो तीन बेरोजगार युवा उसका पीछा करने लगते है। ये तीनों युवा नायिका का पीछा करने से पूर्व सिनेमा हाल के बाहर

नारी के अश्लील चित्रों के पोस्टरों को देख रहे थे। उन्हें पोस्टरों को देख कर उनमें काम-वासना जागृत होती है तो वह नायिका को डराने के लिये कई तरह के षड्यंत्र रचते हैं। इतना ही नहीं वह कई तरह की कविताएँ भी कसते हैं। कभी-कभी तो वह फिल्मी नायक-नायिकाओं के नाम लेकर उनके फिल्मी संवाद दोहराते हुये उसके साथ-साथ चलने लगते है। सिर्फ ये तीन लड़के ही नहीं बल्कि लड़कों के झुंड के झुंड इन अश्लील चित्रों को ललचाई दृष्टि से देख रहे थे। तभी कहीं नारी संस्था की एक औरत ने आकर उस पोस्टर पर तारकोल पोत दिया, लेकिन नायिका कहती है कि "ये तारकोल इन फिल्मों के निर्माता, वितरक और बनियावृत्ति वाली सरकार के मुँह पर पोतना चाहिए जिन्होंने सिनेमा के अर्थतंत्र को हिंसा और सेक्स के साथ जोड़कर अपने लिए काला धन कमाने का जरिया बनाया और नई पीढ़ियों की धमनियों में इस धीमें जहर को प्राणवायु की तरह घोल दिया। देश के राजनीतिक सामाजिक परिदृश्य से घुलती हिंसा को बदबू और मध्यम वर्ग के पिटते युवक की आँखों के सपने की पूरी क्षतिपूर्ति करती चमचमाती फिल्मी दुनिया का कड़वा यथार्थ एक कड़वा सवाल बनकर खड़ा हो गया।''[68] फिल्मों में दिखाई जाने वाली अश्लीलता के कारण युवा वर्ग का ध्यान सेक्स की ओर आकर्षित हुआ है।

युवा वर्ग बेरोजगारी के कारण अपनी पढ़ाई की ओर ध्यान न देकर इसमें अधिक रुचि लेते हैं। इसी कहानी के वीरु, बिशना एवं राजू इसका उदाहरण हैं। वीरु और बिशना तो होटल में बर्तन साफ करके कुछ पैसे जमा करके भी हफ्ते में एक दिन फिल्म देखने अवश्य जाते हैं। लेकिन वहीं दूसरी ओर उनका राजू है जो घर से सब कुछ मिलने के बावजूद भी स्कूल जाने के बजाय बाजारों में सिनेमा हाल में जाता है। इस विषय में उसके दोस्त (वीरु और बिशना) नायिका को बताते हैं-"यह राजू है न औंटजी । इसकी माँ कहती है पढ़ । पर ये पढ़ता ही नहीं । इसकी माँ बंगले में काम करके पैसे कमाती है इसको किताबें, फीस, कपड़ा, लत्ता सब देती है पर ये स्कूल जाने के बजाय पिक्चर देखने घुस जाता है। एक ही क्लास में तीन साल से पड़ा है।"[69]

इससे स्पष्ट हो जाता है कि सिनेमा हाल वालों द्वारा अश्लील पोस्टर लगाने और कामवासना से युक्त फिल्मों को दिखाने से युवा वर्ग का ध्यान भटक जाता है, इससे वह सुमार्ग पर चलने के बजाय कुमार्ग पर चलने लगता है, जिससे उसका भविष्य खतरे से खाली नहीं है। इसके साथ ही कमल कुमार ने विदेशों में श्वेत स्त्री की स्थिति को भी दर्शाया है। बेरोजगारी पर मुख्य कारण अपने परिवेश का प्रभाव और जीवन के प्रति उनका अपना अलग-अलग दृष्टिकोण है, इसलिए गरीब, निम्न वर्ग यहाँ पर पैसे की कमी के चलते मौत के मुँह में जाता रहता है। बेरोजगारी में युवा वर्ग गलत रास्तों पर चल देते हैं जिससे समाज, परिवार और देश का विकास बाधित हो जाता है। कभी कभी तो युवा अपने परिवार, समाज और देश से दूर रहकर पढ़ाई करता है और रोजगार न मिलने के कारण आत्महत्या तक कर लेते हैं । बेरोजगारी से युवा वर्ग ही नहीं पूरी सामाजिकता एवं मानवता पर भी प्रभाव पड़ता है, जिससे देश की अर्थव्यवस्था भी प्रभावित होती है। युवा वर्ग नौकरी की तलाश में दर-दर भटकता है। पढ़-लिखकर भी नौकरी न हासिल कर सकना उसकी चिंताओं में और भी वृद्धि कर देता है। रचनाकार ने अपने कथा - साहित्य मैं नौकरी के लिये संघर्ष करके युवाओं की पीड़ा को बयान किया है। 'कमल कुमार की लोकप्रिय कहानियाँ, कहानी-संग्रह की 'लहाश' कहानी में सूत्र धार नायक पढ़-लिखकर गाँव से शहर आया। इस उम्मीद में कि उसको शहर में अच्छी नौकरी मिल जाएगी लेकिन ऐसा कुछ न हुआ "जैसे-तैसे उसे बी०ए० तक पढ़ाया गया था । इस उम्मीद में कि वही कुछ करेगा। जब शहर आने लगा तो सबके चेहरे पर चमक थी, जैसे उसके शहर आने से उनकी लॉटरी खुलने वाली थी .....पर नौकरी लगी थी तो यहाँ । वह भी कच्ची। तनख्वाह इतनी कि मुश्किल से महीना पार होता ।[70] पढ़े-लिखे वर्ग को भी शिक्षण संस्थान नौकरी उपलब्ध नहीं करवा पा रहे। बेरोजगारी की दर लगातार बढ़ती जा रही है। पढ़ाई में इतना पैसा लगाने के बाद युवा वर्ग या तो खाली बैठने पर मज़बूर है या फिर मर-मरकर अपना गुजारा करता है । लेखिका ने सिफारिश के

दम पर मिलती नौकरियों के कारण कई बार योग्य व्यक्ति को नौकरी न मिलने की पीड़ा को अपने कथा - साहित्य में वर्णित किया है।

'यह ख़बर नही' उपन्यास का पात्र बजरंग शोधकार्य नहीं करना चाहता क्योंकि अब वो समझ चुका है कि जब तक उसके पास पहचान वाला नहीं है। तब तक उसे नौकरी मिल सकना बहुत मुश्किल है और न ही वो आर्थिक रूप में इतना सशक्त है जो पैसा चढ़ाकर नौकरी हासिल कर पाएगा- "घर के हालात ठीक नहीं थे। रिसर्च करके भी क्या तीर मार लेगा। विश्व विद्यालय में कौन उसका सगा बैठा है या उसके पास कौन इतना रुपया धरा है कि नौकरी के लिए दे सके। चार पाँच साल लगाएगा और फिर बेरोजगार।"[71] युवावर्ग में नौकरी न मिलने से निराशा बढ़ती जा रही है और शिक्षण संस्थाओं में नौकरी हासिल करने की एवज में लेन देन की प्रक्रिया के कारण उदासीनता का माहौल है। सत्य को स्वीकार करके नौजवान अपना धैर्य खोते जा रहे हैं। 'आवर्तन' उपन्यास में भी अमर प्रोफेसर के सहारे कॉलेज में नौकरी की आस लगाए हुये है –"किसी का साला किसी का दामाद, किसी का बहनोई, किसी की लड़की, बहू या पत्नी तो कभी फर्स्ट क्लास, कभी कोई टापर बारी-बारी नौकरी पाते गये और उसके घर के बर्तन उलटे होते गये।"[72] शिक्षण संस्थानों की कमियों का भुगतान पढ़े-लिखे वर्ग को करना पड़ता है जो उच्च शिक्षा प्राप्त करके भी नौकरी नहीं कर पाता और अगर नौकरी लग भी जाती है तो उसके द्वारा की गई पढ़ाई के बराबर नहीं होती। 'लहाश' कहानी का पात्र बी०ए० करने के बाद अस्पताल की मॉरचरी में ड्यूटी करता है। यह आज हमारे युवा वर्ग की त्रासदी है- "उसे अभी-अभी माँरचरी में रखा गया था।"[73] युवा वर्ग रोजगार की तलाश में भटकता है। उसे दर-दर की ठोकरें खाकर भी योग्य नौकरी नहीं मिल पाती है।

4.4. धार्मिक समस्याएँ

भारत ही एक ऐसा देश है जहाँ अधिकांशतः धर्म ही आचार-विचारों को संचालित करता आया है। प्रत्येक युग के इतिहास में इस बात का परिचय मिलता है कि भारतीय संस्कृति में ईश्वर में विश्वास, कर्मकाण्ड में विश्वास, पुनर्जन्म में विश्वास, यहाँ तक कि वर्ण–भेद को भी धार्मिक ग्रन्थ ही प्रचारित करते रहे हैं । वस्तुतः मनुष्य जीवन के साथ 'धर्म' उसी समय जुड़ गया था, जब मनुष्य अभी अपनी सभ्यता की यात्रा के प्रारम्भिक चरण में ही था । किसी भी संस्कृति का धार्मिक पक्ष वहाँ के लोगों के मनुष्य तथा उनकी ईश्वर के प्रति आस्था पर निर्भर करता है। धर्म के मार्ग में मात्र आस्था ही एक ऐसा सम्बल है जो निरन्तर व्यक्ति को आत्मबल प्रदान करता है। इसी के बल पर वह अपना जीवन यात्रा सम्पन्न करता चलता है। अपनी दैनिक जीवन की छोटी से छोटी कठिनाई तथा घटना को आस्था के नाम पर ईश्वर को समर्पित करता है। इसी प्रकार अपनी उपलब्धियों के लिये भी वह परमात्मा की कृपा-दृष्टि को आधार मानकर चलता है, इसमें भी कोई संदेह नहीं है कि सभी धर्म मानवीय समता, निःस्वार्थ त्याग और आदर्श की भावना पर जोर देते हैं, किन्तु कभी-कभी अपने धर्म को सर्वश्रेष्ठ कहने से भी नहीं चुकते। परिणामतः दो धर्मों में संघर्ष छिड़ जाता है।

जब कि कोई भी धर्म बड़ा या छोटा नहीं होता है । चूँकि धर्म के संचालक पुरोहित धार्मिक उन्माद पैदा करने के लिए धार्मिक आस्थाओं में खण्डन–मण्डन की प्रवृत्ति को बढ़ावा देते हैं। औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता से हिन्दू मुस्लिम के सम्बन्ध एक दूसरे के प्रति विषाक्त हो गए थे। लेखिका ने धर्म का स्वरूप जो आज पूर्णतः विघटन की कगार पर पहुँच चुका है उसका चित्रण अपने कथा - साहित्य में किया है। भारत में भिन्न-भिन्न धर्मों के लोग रहते हैं जिस कारण धर्म को लेकर अगर जरा सी चिंगारी लगती है तो उस पर बाद में काबू पाना संभव नहीं हो पाता । कट्टरवादी लोग धर्म के नाम पर दंगे करवा देते हैं, जिसका वर्णन लेखिका ने कथा-साहित्य में

बहुतायत में किया है। धर्म के नाम पर जीव हत्या करना और बढ़ रहा अंधविश्वास मनुष्यों को गिरावट की ओर धंसाते जा रहे हैं। कमल कुमार ने अपने कथा-साहित्य में धर्म का जो स्वरुप लिया है उसको निम्न बिन्दुओं द्वारा समझा जा सकता है। जैसे भारत में जाति एक गूढ़तत्व है। संदीप सिंह ने लिखा है "जाति व्यवस्था बंद कोठरियों का एक मकान है।जातियाँ उपजातियों में बंटी हैं, उपजातियाँ कुल और गोत्रों में इस तरह पूरा समाज खंड-खंड विभाजित है। यूँ जाति के आधार पर समाज का विभाजन ही अपने आप में विघटनकारी है जाति के आधार पर सामाजिक संस्करण यानी छोटा-बड़ा, ऊँच-नीच तथा स्पृश्य – अस्पृश्य के व्यवहार ने समाज में विद्वेष और वैमनस्यता को बनाए रखा है।"[74]

तथा कथित उच्च जाति के लोग यह मानते रहे हैं कि निम्न जाति का स्पर्श मात्र भी उन्हें नीच बना देता है किन्तु बात जब स्त्री शोषण की हो या देह उपभोग की हो तब यह स्पर्श उनके लिए सुखद हो जाता है तनिक विरोध से तिलमिला उठने वाले ये लोग उच्च जाति के नाम पर कितने नीच हैं इसका वर्णन कमल कुमार के 'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में मिलता है। ठाकुर उच्च जाति का होने के कारण निम्न जाति की खूबसूरत लड़की सोनारी पर कामुक दृष्टि रखता है । यद्यपि सोनारी भील जाति की खूबसूरत लड़की है किन्तु अपने अस्तित्व पर किसी भी कीमत पर आँच नहीं आने देती है। सोनारी सच्ची एवं जागरुक स्त्री है। वह ठाकुर को जब फटकार लगाती है कि आज के बाद अगर इधर कदम भी रखा तो आपको यहाँ ही मार दिया जाएगा और हवेली तक ख़बर भी नहीं पहुँचेगी। सोनारी की इस धमकी को सुनकर ठाकुर का खून खौल उठता है - "नीच जाति की छोरी और इतना गुमान | जैसे भी हो इसका गुमान तो टूटना ही चाहिए।"[75] एक तो पुरुष उस पर भी उच्च जाति के ठाकुर का अहं उसे धिक्कारता है और वह खूँखार जानवर की तरह व्यवहार करता है। सोनारी का बलात्कार करके वह न केवल अपने पुरुष अहं को सन्तुष्ट करता है बल्कि अपनी तथा कथित उच्च जाति पर भी अभिमान

करता है। उच्च जाति के ज़मींदार, पूँजीपतियों द्वारा दलित स्त्रियाँ सबसे अधिक कुचली जाती हैं।

अनेक कार्य क्षेत्रों में आए दिन पुरुष की हवस का शिकार बनती हैं। निम्न वर्ग की होने के कारण इनकी अस्मिता को न के बराबर समझा जाता है। यह वर्ग अपने ही घरों या दफ्तरों में छोटे काम में कार्यरत स्त्री का सामाजिक और यौन शोषण भी करता है। भारतीय समाज में निम्न वर्ग की नारी के विकास के आयाम अभी भी कमजोर हैं तभी तो उच्च वर्ग का पुरुष आज भी उसे परम्परागत अधिकार की भावना से देखता है। वह गरीबी, मजबूरी और अज्ञानता के कारण आज भी बेबस सी दिखाई देती है। आजादी के बाद स्त्रियों की सबलता के लिये जो तमाम योजनाएँ बनाई गई उनका लाभ भी तथाकथित निम्न स्त्रियों तक नहीं पहुँचता। वह आजाद देश की महिलाएँ तो कहलाती हैं किन्तु पुरुषों की हवस का शिकार भी बनती है। वहाँ वह पूरी तरह से पुरुषों की गुलाम बन जाती हैं। उच्च जाति के पुरुष सदैव इनको अपनी हवस का शिकार बनाता आया है। बात यहीं पर खत्म नहीं होती है, बल्कि जाति और सम्प्रदायगत भेदभाव व्यवसाय में भी देखा जा सकता है।

4.4.1. धर्मान्धता की समस्याएँ

भारतीय समाज में धर्म के नाम पर बहुत सारे गलत काम किये जाते हैं। धर्म के नाम पर पशुओं की बलि दी जाती है। अपने गुनाहों की माफी माँगने के लिए ईश्वर / अल्लाह को खुश करने के लिए बेजुबान जीवों का सामूहिक हत्या करना क्या इसान को उसके पापों से मुक्ति दिला पाएगा। त्याग और बलिदान का प्रमाण देने के लिए पशुओं को खरीदकर पहले उनकी सेवा की जाती है और फिर बकरीद के दिन उनकी निर्मम हत्या कर दी जाती हैं। अंधी आस्था की भेंट चढ़ते पशु आखिर कब तक ऐसे ही मानव के लिये शहीद होते रहेंगे? कमल कुमार ने

अपने कथा-साहित्य में धर्म के नाम पर होती जीव हत्या का वर्णन किया है। 'घर - बेघर' कहानी-संग्रह की 'काफिर' कहानी में बचपन में करीम के घर में बकरीद के दिन बकरे की बलि दी जाती है। करीम बलि देना सही नहीं मानता है। करीम अपनी बकरी को अज्जी के नाम से पुकारता है और उसके साथ खेलता है। बकरीद के दिन करीम सारा दिन अज्जी को ढूँढता रहा लेकिन खाने के समय जमाल अज्जी की बलि देने की घटना का ज़िक्र करता है। अज्जी की हत्या के बारे में सुनकर करीम उल्टी कर देता है और रोने लगता है लेकिन जमाल धर्म के नाम पर होती ऐसी जीव हत्याओं को श्रेष्ठ बताता है। जमाल के शब्दों में- "तुझे क्या हुआ? आज बकरीद है खुशी का दिन है। सुबह से मनहूस अज्जी की रट लगाए है। चल जा, दफा हो, काफ़िर कहीं का। ..... अगले साल इसको सब सिखाना पड़ेगा। गुनाह है यह। मज़हब की तौहीन है।"[76] मज़हब के नाम पर अपने गुनाह छिपा लिए जाते हैं।

ईश्वर की नज़र में इंसान पशु सब बराबर हैं लेकिन इंसान अपने फायदे के लिए जीवों की हत्या कर कुर्बानी के नाम पर खुदा को खुश करता है। बकरीद के दिन सुबह से ही अनगिनत पशुओं की हत्या होनी शुरु हो जाती है। 'काफिर' में लेखिका जीव-हत्या के दृश्य का चित्रण कुछ इस तरह करती है "बिस्मिल्लाह अल्लाहु अकबर–तीन बार पढ़ा गया था। फ़ैज़ू ने हाथ में छुरी उठाई थी और गुटक से ऊपर ठोड़ी के थोड़ा नीचे मुलायम सी जगह ढूँढकर छुरी चलाई थी। बकरा पंद्रह बीस मिनट तक हाथ-पैर पटकता रहा और ज़मीन पर उलट-पुलट होता रहा, फिर शांत हो गया था।"[77] जीव-हत्या को खुदा का दिया गया आदेश मानने वाले खुद की और दूसरों की आँखों में धूल झोंकते हैं सब कुछ देखकर समझकर भी अनजान होने का ढोंग रचते हैं।

जादू टोना भी समाज में समस्या उत्पन्न करती है। इसमें लोकापवाद शामिल रहता है। ये भी अंधविश्वास का ही एक अंग है। अन्धविश्वासों से ग्रस्त मानसिनकता के चलते लोग

अक्सर जादू-टोने को अन्जाम देने लगते हैं। उन्हें लगता है कि इस तरह का कार्य करने से उनकी मनोकामना पूरी हो जाती है। 'मैं' घूमर नाचूँ' उपन्यास में मात्र आठ बरस की वीनणी का विवाह हो रहा है। वैवाहिक अनुष्ठान लम्बा होने के कारण वह आठ साल की बच्ची फेरों के समय मामा की गोद से लड़खड़ाकर गिर जाती है। उसकी आयु को न देखकर सभी लोग यह कहने लगते हैं कि -"अरे अरे किसी ने .. ऊपर टोटका कर दिया दिखै है। लुगाइयों की आवाज एक साथ मिल कर जोर पकड़ गई थी। अरे कौन डायन है यहाँ बालिका पर टोटका कर दिया। अरे किसने किया टोटका?" [78] सदियों से चला आ रहा ये विश्वास लोगों के हृदय में घर कर चुका है। अज्ञानता का अंधकार होने के कारण ग्रामीण लोग शहरों की अपेक्षा इसमें पूर्ण विश्वास करते हैं।

आज वैज्ञानिक युग में भी इसका इतना बोलबाला है कि अगर कोई व्यक्ति बीमार पड़ जाए या उसके रोग का शीघ्र निदान न हो तो यह समझा जाने लगता है कि उसे कोई बीमारी नहीं बल्कि उस पर भूत प्रेत का साया है, 'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में कमल कुमार ने राजस्थान के गाँवों का चित्रण किया है। यहाँ पर अशिक्षा के कारण भूत-प्रेत में आज भी विश्वास किया जाता है जैसे रात के समय कपड़े उठाए हुये किसी स्त्री को बावड़ी पर जाते हुये देख लोग -चिल्ला कर कहते हैं "भूतनी है, अरे भागो, भूतनी है।"[79] गाँव के लोग आधीरात को सही सलामत व्यक्ति को चलता देखकर भूत का ही भ्रम करते हैं क्योंकि भूत-प्रेत में उनका गहन विश्वास है। इसी उपन्यास में पड़ोसी उसे लड़कियों को पानी लेने भेजने के लिए कहते हैं तो वह कहता है "जो कहयो वा सिर माथे पर,दोनों विधवा छोरियाँ कैसे मैं भेज दूँ कुएँ बावड़ी पर तुम तो जानयोऽ हो। भूत-प्रेत का डर लागै है।"[80]

कहा जा सकता है कि समाज चाहे हिन्दू हो मुस्लिम दोनों में जादू-टोने का बहुत प्रचलन है। यह विश्वास सदियों से चला आ रहा है। शिक्षा का अभाव होने के कारण ग्रामीण लोग इनमें

पूर्ण विश्वास करते हैं। इसी विश्वास के चलते वह पण्डितो/पुरोहितों के घरों में व्यर्थ ही चक्कर लगाते हुये अपनी कीमती समय बरबाद करते हैं। कभी वह अपने मन की शांति के लिए तो कभी अपने बच्चों के सुखद भविष्य के लिये वह अक्सर जादू-टोने करते देखे जाते हैं। लेखिका ने अपने कथा साहित्य के माध्यम से समाज में फैले इस भ्रम को दूर कर लोगों में जागृति लाने का प्रयास किया है।

4.4.2. समाज में प्याप्त कुरीतियाँ एवं रूढ़ियाँ

किसी भी समाज के आदर्श, विश्वास, नियम व्यवहार व मान्यताएँ समयानुसार बदलती रहती हैं। जो नियम अथवा मान्याताएँ नहीं बदलती वह रूढ़ि और परम्परा के क्षेत्र में आ जाती हैं। आज हमारा देश विकसित देश है। शिक्षा, विज्ञान, कला, अर्थव्यवस्था आदि क्षेत्रों में विकास को देखा जा सकता है लेकिन प्राचीन समय से चली आ रही अन्धविश्वास की समस्या देश में आज भी व्याप्त है। यह कथन बहुत पुराना हो गया है कि इंसान आज चाँद पर पहुँच गया है क्योंकि आज विज्ञान ने इतनी तरक्की कर ली है कि आज कुछ भी असंभव नहीं रह गया जो मनुष्य न कर सके। लेकिन विज्ञान जितनी भी तरक्की कर ले मनुष्य का भूत-प्रेतों, जादू-टोने से विश्वास न कभी पहले उठ सका था और न ही आज | 21वीं शताब्दी में भी जब हमें अंधविश्वासों की कहानियाँ सुनने को मिलती हैं तो हमारा हृदय छलनी हो जाता है। औरतों के साथ ऐसी घटनाएँ सर्वाधिक होती हैं।

'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास में लोगों की गलतफहमी का शिकार बिंदिया न जाने कब बिन्दिया से भूतनी बन जाती है और लोग उसे पागल और पंचायत द्वारा डायन घोषित कर देते हैं - "पता नहीं फिर कैसे और क्या हुआ। बिन्दो भूतनी बन गई उसे जाते देखकर बच्चे पत्थर मारते, वह डरकर बावड़ी के पीछे या अन्दर छिप जाती। भूखी-प्यासी सुबह से शाम तक छिपी

रहती डर के मारे। रात को वापिस आना चाहती तो फिर वही भूतनी का शोर मच जाता। भूतनी से वह डायन बनी। पंचायय ने उसे डायन घोषित कर दिया।"[81] इस तरह लोगों की गलतफहमी बिन्दिया की जिन्दगी तबाह कर देती है। लोगों द्वारा उस पर जुल्म किया जाने लगा। परिवार ने उसे घर से निकाल दिया। उसकी हालत विचारणीय हो गयी।

सामाजिक कुरुतियों ने अंततः बिन्दिया की जान ले ली। अंध विश्वास में यकीन करने वाले लोगों को तो उस भूतनी से अपना पीछा छुड़वाना था और उस पर फैसला सुनाया गया पंचायत द्वारा –"पंचायत ने फैसला दिया। अगले दिन उसे पेड़ पर रस्सी के फँन्दे में डालकर लटका दिया गया। दो-तीन दिन तक उसकी लाश वहाँ झूलती रही थी। फिर चील-गिद्द इकट्ठे होने शुरू हुए थे |"[82] अंधविश्वास में डुबा यह समाज बिन्दिया की परेशानी समझे बिना ही पंचायत ने उसे सजा दे दी। इस तरह की अन्य कथाओं का वर्णन इस उपन्यास में जगह-जगह देखने को मिलती है। अचीन्ती कथा, नीम कूदी कथा, चुटनी कथा, चाँदी कथा, बरखी कथा, ऐसी अनेक कथाएँ है जो समाज में फैले अंधविश्वास की बलि चढ़ती औरतों की मार्मिक कहानियाँ प्रस्तुत करती हैं। 'मैं घूमर नाचूँ' उपन्यास की रज्जो बड़ी हवेली की छोटी बीणनी है। रज्जो संयुक्त परिवार में रहती है। पति के दिसावरी चले जाने के बाद से ही रज्जो दुःखी उदास रहती है। रज्जो का पति पिछले सात साल से लौटकर नहीं आया और कहा जाता है कि अकेली औरतों को भूत पकड़ लेते हैं इसी अंधविश्वास के चलते घरवाले रज्जो को बाबा - ओखा को दिखाने लग जाते हैं। ओझा की बुरी नियत का पता उसके शब्दों से चलता है-"जो चला गया उसे जाने दे। अब कोनी आस्यी। तूने क्यों पकड़ रखा है उसे। छोड़ उसे छोड़ती क्यों नहीं और सुन छोरी, थाकी मन की मुराद पूरी हवेली। थारी कामना अधूरी कोनी रहवे। मैं आऊँलो या बीने भेजस्यू उसे जिसे तू कहेगी। दरवाजा पिछला खुला रखना रात को। अब जिद्द छोड़। बिस्सा चला गया तो जाने दे। अब कोनी आवेगा बिस्सा | छोड़ - ऽ छोड़ेगी के नहीं...."[83] इस

तरह बाबा की बुरी नीयत को रज्जो ताड़ जाती है और बाबा के चुंगल से बचकर जलती लकड़ी उठाकर उस पर टूट पड़ती है। इस तरह यह बाबा लोग अंधविश्वास का फायदा उठाकर औरतों की आबरु से खेलते हैं।

साहित्यकार परेशान है कि दुनिया ने कितनी तरक्की कर ली किन्तु भारत की पढ़ी-लिखी जनता आज भी सोलहवीं शताब्दी में जा रही है। उस समय भी लोगों को सही मार्ग पर चलने के लिए कबीर जैसे क्रंतिकारी समाज सुधारकों को पारम्परिक दकियानूसी पंडित समाज द्वारा अवहेलना ही मिली थी। आज भी वही लोग वही समाज है जो सब कुछ देखकर भी मूक बधिर बने हुये हैं। इसके उपरांत लोक विश्वास भी समाज में अपना प्रभाव जमाये बैठा है। मानव जीव में कई तरह के विश्वास देखने को मिलते हैं। अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिये मनुष्यों द्वारा कुछ वस्तुओं में अपनी आस्था दिखाई जाती है किसी का धागे बाँधने में विश्वास है तो किसी का देवी माँ में विश्वास। यह सारे विश्वास मनुष्यों के जीवन के साथ कहीं न कहीं जुड़े रहते हैं। लेखिका कमल कुमार ने अपने कथा-साहित्य में ऐसे ही विश्वासों को लेकर अपने समाज का वर्णन किया है। 'मै घूमर नाचूँ', फिर वहीं से शुरू, 'पासवर्ड' में पीपल के पेड़ को धागा बाँधने से जुड़ा विश्वास लिया गया है। 'फिर वहीं से शुरू' कहानी-संग्रह की 'पार्टनर' कहानी में नीलू का रिश्ता नहीं हो पा रहा जिस कारण वो चिन्ता में घुलती जा रही है। इसी चिन्ता में ही नीलू भी औरों की तरह धागा बाँधकर मन्नत माँगती है। "वह माँ के साथ छत्तरपुर मंदिर गई थी। पीपल के पेड़ पर लटके हजारों कपड़ो-धागों के बीच माँ की आँख बचाकर वह भी एक धागा बाँध आई थी।‘‘[84] हर वर्ग में चाहे कोई पढ़ा-लिखा है या फिर अनपढ़ हर वर्ग में मन्नते माँगने और धागा बाँधने से जुड़ा विश्वास आज भी दिखाई देता है।

‘फिर वहीं से शुरू’ कहानी - संग्रह की ही 'काला और सफेद दस्ताना' कहानी में जोशी द्वारा मन्नतें माँगकर ही पुत्र की कामना पूरी करता है—"तीन लड़कियों के बाद मन्नते माँगकर,

गंडा, तावीज़ पहन कर मंदिर - मुल्लाओं के पास जाकर, व्रत उपचार करके पत्नी को बेटा मिला था।"[85] लोगों द्वारा अपने विश्वास इनके साथ जोड़ दिए जाते है और वही विश्वास इतने पक्के हो जाते है कि सालों-साल चलते रहते है। 'घर-बेघर' कहानी - संग्रह की 'काफिर' कहानी में लोगों द्वारा धर्म में इतना विश्वास दिखाया जाता है कि उसी विश्वास की जीत हो जाती है और उनकी मन्नतें पूरी हो जाती हैं। कुछ लोग ताज़िए पर धागा बाँध रहे थे। उनका विश्वास था कि इससे मन की इच्छा पूरी होती है। कुछ औरतें ताज़ियों को छू रही थीं, उनकी मन्नतें पूरी हो गई थी कुछ औरतों में होड़ लगी थी अपने बच्चों को ताज़ियों के नीचे से निकालने की। उनका मानना था कि इससे बच्चे हारी - बीमारी से बचेंगे और उनकी आयु बढ़ेगी।"[86] इस तरह हर कहीं कोई न कोई विश्वास लोगों में देखने को मिलता है। मन्नते मांगना और अपनी इच्छाओं की पूर्ति होने पर भगवान के आगे सिर झुकाना। 'मैं घूमर नाचूँ,' उपन्यास में कृष्णा जब बचपन में अपने घर की ओर लौट रही होती है तब वो पीपल के पेड़ पर लोगों के विश्वास से बंधी चुन्नियाँ देखती है - "थोड़ी ही दूर पर पीपल का पेड़ था। उसके नीचे चबूतरा था। पीपल के पेड़ पर अनगिनत लाल-पीला-हरी गोटे-किनारी की चुन्नियों और रंगीन डोरियाँ बाँधी थीं। चबूतरे पर दूध, चावल, रोली से नहाई मूर्तियाँ पड़ी थीं।"[87] पीपल के पेड़ से अपने विश्वास जोड़ते लोग उनसे अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिये धागे बाँधते हैं।

लेखिका इस विषय पर सोचती है कि आखिर क्यों लोग इतने धागे और चुन्नियाँ इस पर बाँधतें हैं। लेखिका के शब्दों में- "इस पेड़ पर कितने धागे, चुन्नियाँ परांदे जैसे बंधे हैं। यह सब हमारी, हम जैसों की अधूरी इच्छायें, कामनाएँ और महत्वकांक्षाएं हैं। हर कोई किसी न किसी दुःख से, कष्ट से मुक्ति चाहता है तो कोई किसी लक्ष्य को, (पुत्र, धन, यश) पाना चाहता है। इसके लिए धागा बाँधा जाता है। जब इच्छा पूरी होगी तो खोला जाता I"[88] यह सारे विश्वास

हमारी इच्छाओं व कामनाओं को पूर्ण करने से जुड़े हैं इसीलिये व्यक्ति इन्हें पूर्ण करने के लिए इन विश्वासों का सहारा लेता है।

4.5. राजनीतिक समस्याएँ

वर्तमान समय में न्याय व्यवस्था पर राजनीति का प्रभाव स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। राजनीति ने न्याय व्यवस्था में अपनी जड़ें मजबूत की हैं। इसलिए तो न्यायालय के अधिकतर फैसले राजनीति से प्रेरित रहते हैं। निरपराध व्यक्तियों को अपराधी साबित कर दिया जाता है और अपराधी बाइज्जत रिहा हो रहे हैं। न्यायाधीश किसी न किसी राजनीतिक दल से जुड़े होते हैं। इसी कारण वह राजनेताओं को गुनाहगार होने के बावजूद भी सज़ा नहीं दिलवा पाते। 20वीं शती का नौंवा दशक घोटालों और घपलों का दशक माना जाता है। इस दशक में राजनेताओं ने अनेक घोटाले किए पर आज तक किसी भी राजनेता को सजा नहीं हो पाई। 'यह खबर नहीं' उपन्यास में अमित खरे इन राजनेताओं द्वारा किए गए घोटालों के विषय में बताता है कि "सन् 1990 अगस्त में वीरेश प्रसाद सिन्हा का एक पत्र प्रधानमंत्री वी०पी० सिंह के नाम समाचार पत्रों में छपा था। पत्र में कहा गया था कि आदिवासियों की विकास योजनाओं के लिए दिए गए 80 से 90 प्रतिशत धन पशु पालन विभाग के माफिया लूट रहे हैं। पर कुछ नहीं हुआ। आज देश एक ख़तरनाक मोड़ पर है। सभी राजनेता एक ही थैली के चट्टे बट्टे हैं। घोटाला में सभी शामिल हैं......सन्तरी से मंत्री तक। अपने भ्रष्ट कारनामों और भ्रष्ट कार्य प्रणाली को बचाए रखने के लिए अपराध जगत का सहारा लेते हैं; इसलिए अपराधीकरण फैल रहा है।"[89]

न्याय प्रणाली के प्रति अविश्वास बढ़ता जा रहा है। न्याय के देवता को आसानी से बेचा खरीदा जा रहा है। सरकारी वकील आसानी से खरीदे जाते हैं। अपराधियों को छुड़वाने के लिए राजनेता जजों पर दबाव डालते हैं। न माने तो तबादले करवाये जाते हैं और तरक्कियाँ रूक

जाती हैं। यह वर्तमान भारत की सही तस्वीर है जिसमें न्यायाधीश तक राजनीति का शिकार हो रहे हैं। चारों ओर गुण्डाराज तीव्र गति से पनप रहा है बल्कि यो कहें कि आज जनता का राज न होकर गुण्डों का राज हो गया है। इन गुण्डों के लिए न तो कोई कानून है और न ही इन्हें पुलिस का डर। 'यह ख़बर नहीं' उपन्यास में पोस्ट ग्रेजुएट नेहा को नौकरी का झाँसा देकर उसका बलात्कार किया जाता है। ऐसा घृणित कार्य करने वालों को पुलिस द्वारा कोई सजा नहीं दी जाती। लेखिका के शब्दों में- "राजनीतिक संरक्षणों और दौलत के नशे में चूर नई सम्पन्न पीढ़ी का युवा वर्ग जिसके लिए औरत क्या है ? उपभोग सामग्री जिसे न समाज का डर है न कानून से न पुलिस से। पुलिस उनकी रखैल है, कानून दलाल। इसलिए यह चलेगें अपनी चाल।"[90] वर्तमान समय में पुलिसकर्मी स्वयं गुण्डों के साथ मिलकर ऐसे कार्य करवा रहे हैं।

अगर पुलिस इन गुण्डों को पकड़ कर कानूनी कार्यवाही करे तो ऐसे अपराधों में कमी आ सकती है। विशिष्ट जन यानि अति महत्वपूर्ण लोग और साधारण जन यानि आम आदमी, इन दोनों की स्थिति में ज़मीन और असमान का अन्तर होता है। विशिष्ट जन तमाम सुख-सुविधाओं से भरा जीवन व्यतीत करते हैं। आम जन चाहे बीमारी की हालत में हो या उसकी कोई अन्य विवशता हो उसे तो सामान्य जीवन बिताना ही है। जनता द्वारा चुना हुआ नेता रास्ते से गुजर रहा है और 'यह ख़बर नहीं' उपन्यास में अरूण के पिता को दिल का दौरा पड़ा है, उसे अस्पताल पहुँचाने की जरुरत है। अरूण पिता को अस्पताल पहुँचाने के लिए अनुनय विनय करता है। उसे तब तक नहीं निकलने दिया जाता जब तक वी०आई०पी० न गुजर जाए। पुलिस वाले कहते है "कोई वी०आई०पी० है। जब तक यहाँ से गुजर नहीं जाते ट्रैफिक को नहीं जाने दिया जाएगा।"[91] जब सामंतशाही थी तो सामन्तों की सवारी निकलती थी कोई भी व्यक्ति उनके रास्ते में नहीं आ सकता था। स्थिति आज भी लगभग वैसी है जो तब सामन्त थे आज नेता हैं।

जनता स्वयं अपने प्रतिनिधि को सत्ता में लाती है और सत्ता में लाने के बाद वह अपनी बात रखने के लिए नेताओं से ही कतराने लगती है। नेता उनकी बात सुनेगा भी कि नहीं, इस बात का डर इन्हें हमेशा सताता रहता है। कपिलनाथ के ही शब्दों में "असली नेता तो अपने महलों में होंगे उड़न खटोले पर पधारेंगे कुछ देर पहले या घंटा दो घंटा बाद में पता नहीं उनसे बात होगी भी कि नहीं, होगी भी तो वह अपनी बात कैसे कहेगा। कैसे समझाएगा इतनी बड़ी राम कहानी कैसे सुनेगा नेता। इसलिए सोच समझकर लिखवा लाया था। पकड़ा देगा जितनी कह सका कह देगा पर इसकी क्या गारंटी थी। इस कागज़ टूकड़े को रखकर नेता कहीं भूलेगा नहीं। दूसरे कागज़ों के साथ रद्दी की टोकरी में नहीं पहुँच जाएगा।"[92] नेता स्वयं ऐशो आराम की जिन्दगी व्यतीत करते हैं इसलिए इन्हें आम जनता भी इस तरह का जीवन यापन करती हुई नज़र आती है। यह कोई एक नेता की बात नहीं बल्कि सभी एक ही थैली के चट्टे-बट्टे हैं। आम आदमी अगर कहीं सिर उठाता भी है तो उसका सिर ही कुचल दिया जाता है क्योंकि वह अदना सा व्यक्ति है। आज की राजनीति पूरी तरह से ढोंग और गन्दगी से भरी हुयी है।

राजनीति एक ऐसा है जो हर क्षेत्रों में अपनी नाक घुसाये रहती है। शैक्षणिक व्यवस्था में ये घून की तरह अन्दर - ही - अन्दर खाये जा रही है जिससे शैक्षिक व्यवस्था जर्जर हो रहा है। शिक्षा के सर्वोच्च संस्थान विश्वविद्यालयों में व्यक्ति की प्रतिभा की सर्वाधिक हत्या होने लगी है। नेता, कॉलेजों विश्वविद्यालयों के विद्यार्थियों के अपने फायदे के लिए इस्तेमाल करने लगी। नेताओं के दलाल छात्रों द्वारा आन्दोलन, दंगे-फसाद, हड़तालें करवाना बखूबी जानते हैं। राजनीतियों के लिये विद्यार्थी एक सीढ़ी का काम करता है। विश्वविद्यालय तो इस तरह की राजनीति का अड्डा बन चुका है। 'यह खबर नहीं' उपन्यास में पत्रकार कर्मवीर अपने मौसा (कपिलनाथ) को दिल्ली विश्वविद्यालय के बारे में बताता है- "मौसा वहाँ तो छात्रों को हिंसा और अपराध द्वारा राजनीति में दीक्षित किया जाता है। राजनीति की शुरूआत की यह जरुरी

शर्त है। मैंने सोचा था परिवर्तन लाऊँगा, पर जीवित रहूँगा तभी न। वहाँ पर तो भाड़े पर हत्याएँ होती हैं। दिन दिहाड़े लोग सड़क पर बाजार में, हत्यारें हीरों होण्डा पर सवार होकर आते हैं। सबकी आँखों के सामने गोलियों से पाँच दस को भून कर चले जाते हैं और इनकी तुलना भगत सिंह और चन्द्रशेखर आजाद से की जाती है। यह बहादुरी और साहस का भयावह और विकृत रूप है। कोई कुछ नहीं कहता। मैं आज आपके सामने जिन्दा बैठा हूँ मुझे विश्वास नहीं हो रहा।"[93] कभी-कभी उच्च शिक्षण संस्थानों में राजनीति का इतना वीभत्स रूप देखने को मिलता है कि व्यक्ति भयभीत हो जाता है। कर्मवीर जैसा व्यक्ति यदि इस दूषित वातावरण का विरोध करना चाहे तो मौत का भय या अन्य कोई दबाव उसे विवश कर देता है कि वह व्यवस्था के साथ समझौता कर ले | यही कारण था कि कर्मवीर समझौतावादी नीति को अपना कर अपनी जान सुरक्षित रख सका।

लेखिका ने अपने कथा - साहित्य में राजनीतिक संस्थाओं के दिन-प्रतिदिन गिरते जा रहे स्तर का उल्लेख किया है। राजनीतिक पर्टियों की बढ़ती जा रही सत्ता की भूख उन्हें जनता के प्रति सहिष्णु नहीं रहने देती। राजनीतिज्ञ सिर्फ अपना ही स्वार्थ साधने पर अमादा हैं इसलिए देश में लगातार घोटालों की संख्या बढ़ती जा रही है। देश की जनता गरीब हो रही है वहीं नेताओं की आदमनी दिन दुगुनी रात चौगुनी होती जा रही है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. डॉ0 लक्ष्मीसागर वार्ष्णेयः द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य, राजपाल एण्ड सन्स, कश्मीरी गेट, दिल्ली प्र0सं0 1973, पृ० 181।
2. श्याम बहादुर वर्मा (प्र०सं० एवं कोशकार) : प्रभात आधुनिक हिन्द शब्दकोश, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2014, पृ0-1307।
3. सोहन राज तातेड़, सुशील नान्दलः समाज शास्त्रः नई दिशायें, अनु प्रकाशन, जयपुर, 2015, पृ० 164।
4. www.hi.m.wikipedia.org.
5. कमल कुमार : घर - बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया, नई दिल्ली, 2007, पृ० - 128-129।
6. कमल कुमार : पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1984, पृ० 17।
7. कमल कुमारः घर बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया, नई दिल्ली, 2007, पृ0 109।
8. कमल कुमार : अपार्थ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 1986, पृ0 – 48।
9. कमल कुमारः घेर–बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया, नई दिल्ली, 2007, पृ० – 111।
10. महेन्द्र कुमार वर्मा: भारतीय संस्कृति के मूलाधार, प्रत्युष प्रकाशन, कानपुर, 1969, पृ0 – 19।
11. कमल कुमारः पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1984, पृ० 18।
12. कमल कुमारः कमल कुमार की लोकप्रिय कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ0 46।
13. कमल कुमार : घर - बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया, यात्रा बुक्स, नई दिल्ली, 2007, पृ० 127-128।
14. कमल कुमारः मैं घूमर नाचूँ, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 2010, पृ0 67।

15. कमल कुमार : अपार्थ; नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1986, पृ0 109।

16. महेन्द्र कुमार वर्मा: भारतीय संस्कृति के मूलाधार, प्रत्यूष प्रकाशन, कानपुर, 1969, पृ0 20।

17. कमल कुमार : अपार्थ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1986, पृ0 12।

18. कमल कुमार : अपार्थ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 1986, पृ0 17।

19. कमल कुमार अपार्थ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1986, पृ0 43।

20. कमल कुमार : आवर्तन, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1992 पृ0 15।

21. कमल कुमार : मै घूमर नाचूँ, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 2010, पृ0 159 22।

22. वहीं पृ० 159।

23. कमल कुमार : पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली 1984, पृ0 39।

24. कमल कुमार : फिर वहीं से शुरू, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली 1998, पृ0 100।

25. कमल कुमार : घर - बेघर पेंगुइन बुक्स इंडिया, यात्रा बुक्स, नई दिल्ली, 2007, पृ0 85 ।

26. कमल कुमारः घर - बेघर, पेंगुइन - बुक्स इंडिया, यात्रा बुक्स, नई दिल्ली, 2007, पृ0 88।

27. डॉ0 दीपक वर्मा: भारत में मानवाधिकार, पृ० 24।

28. कमल कुमार : पहचान, पृ० 34।

29. कमल कुमारः पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस नई दिल्ली, 1984, पृ0 78।

30. वहीं पृ0 83।

31. कमल कुमारः अन्तर्यात्रा, पृ0 96।

32. कमल कुमार : क्रमशः पृ० 98।

33. कमल कुमार : पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, दिल्ली, 1984, पृ0 88।

34. कमल कुमार : फिर वहीं से शुरू, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली 1998, पृ0 89।

35. कमल कुमार : फिर वहीं से शुरू, सामयिक प्रकाशन, नई दिल्ली, पृ0 89।

36. वहीं पृ0 100।

37. कमल कुमार : घर - बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया यात्रा बुक्स, नई दिल्ली, पृ0 107।

38. कमल कुमारः क्रमश : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1996, पृ0 89।

39. बच्चन सिंहः आधुनिक हिन्दी आलोचना के बीज शब्द, पृ0 141।

40. परमानन्द श्रीवास्तवः स्त्री मुक्ति के तार्थ, पृ0 18।

41. विमल सहाबुद्धः हिन्दी उपन्यासों में नारी का मनोवैज्ञानिक चित्रण, पृ० 222।

42. विजयावारदः साठोत्तरी हिन्दी कहानी और महिला लेखिकाएँ, पृ0 189–190।

43. महादेवी वर्माः श्रृंखला की कड़ियाँ, पृ0 52।

44. रोहिणी अग्रवालः हिन्दी लेखन : दिशाएँ एवं संभावनाएँ, पृ0 12।

45. कमल कुमार : यादगारी कहानियाँ, पृ0 146।

46. कमल कुमार : पहचान नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1984, पृ0 – 20।

47. कमल कुमार : क्रमशः, भारतीय ज्ञान पीठ, नई दिल्ली, 1996, पृ0-24।

48. कमल कुमार : मैं घूमर नाचूँ, राजपाल एण्ड सन्स दिल्ली पृ० 110।

49. वहीं पृ० 138-139।

50. कमल कुमारः पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1984, पृ0 10 – 11।

51. आभा गुप्ताः नवम् दशक की हिन्दी महिला कथाकरी की नारी चेतना, पृ० 52।

52. कमल कुमारः यादगारी कहानियाँ, पृ0 18।

53. महेन्द्र कुमार वर्माः भारतीय संस्कृति के मूलाधार, प्रत्युष प्रकाशन, कानपुर, 1969, पृ0 19–20।

54. कमल कुमार : पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1984, पृ0-65।

55. वही पृ0 116।

56. कमल कुमारः वैलेन्टाइन डे, कीन बुक्स, दिल्ली, 2007, पृ0 – 35।

57. वहीं – 78।

58. कमल कुमार : घर-बेघर, पेंगुइन बुक्स इंडिया, यात्रा बुक्स, नई दिल्ली, 2007, पृ० – 12।

59. वहीं पृ0 13।

60. वहीं पृ0 36।

61. यशपाल : बात-बात में बात, पृ0 50-51।

62. अमित कुमार सिंहः भूमण्डलीकरण और भारतः परिदृश्य और विकल्प, पृ0 82।

63. कमल कुमार : पहचान, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1984 पृ0 38।

64. वहीं पृ072।

65. वहीं पृ0 81-82।

66. कमल कुमार : अपार्थ, नेशनल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 1986, पृ0 91।

67. कमल कुमारः मैं घूमर नाचूँ, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली, 2010, पृ0 42।

68. कमल कुमार : हैमबरगर, पृ0 32।

69. कमल कुमारः क्रमशः पृ0 88।

70. वहीं क्रमशः पृ0 90।

71. कमल कुमारः कमल कुमार की लोकप्रिय कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ० 48।
72. कमल कुमार : यह खबर नहीं, अखिल भारतीय, दिल्ली, 2000, पृ0 28।
73. कमल कुमार : आवर्तन, पृ0 10।
74. कमल कुमार : कमल कुमार की लोकप्रिय कहानियां, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृ0 45।
75. संदीप सिंह : भारत में दलित आंदोलन, पृ0 45।
76. मैं घूमर नाचूँ, पृ0 109।
77. घर–बेघर, पृ0 166।
78. वहीं 168।
79. मैं घूमर नाचूँ, पृ0 126।
80. वहीं पृ0 124।
81. वहीं पृ० 231।
82. वहीं पृ० 124।
83. वहीं पृ० 126।
84. वहीं पृ० 237।
85. फिर वहीं से शुरू, पृ0 28-29।
86. वहीं पृ0 36।
87. घेर - बेघर, पृ0 116।
88. मैं घूमर नाचूं, पृ० 234।
89. पासवर्ड, पृ0 122।

90. यह खबर नहीं, पृ0 147।

91. वहीं पृ0 129।

92. वहीं पृ० 07।

93. वहीं पृ0 33।

94. वहीं पृ० 26।